ओ३म्

आर्य जगत्

कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

रविवार, 24 जनवरी 2016 | आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा का साप्ताहिक पत्र | सप्ताह रविवार 24 जनवरी 2016 से 30 जनवरी 2016

मा.कृ. –01● वि० सं०–2072 ● वर्ष 58, अंक 56, प्रत्येक मगंलवार को प्रकाश्य, दयानन्दाब्द 192 ● सृष्टि–संवत् 1,96,08,53,116 ● पृ.सं. 1–12 ● इस अंक का मूल्य – 2.00 रुपये

डी.ए.वी. जीन्द ने 131 कुण्डीय यज्ञ रचाकर स्वामी श्रद्धानन्द को श्रद्धाञ्जलि दी

डी.ए.वी. शताब्दी पब्लिक स्कूल जींद के प्रांगण में "स्वामी श्रद्धानन्द बलिदान दिवस" के उपलक्ष्य में 131 कुण्डीय विशाल सामूहिक यज्ञ का आयोजन किया जिसमें मुख्य अतिथि सत्यपाल आर्य, सचिव डी.ए.वी. प्रबन्धकर्तृ समिति नई दिल्ली, सह सचिव आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा नई दिल्ली व महामन्त्री आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि उपसभा हरियाणा उपस्थित हुए। कार्यक्रम की अध्यक्षता डॉ. धर्मदेव विद्यार्थी, प्रधान आर्य युवा समाज हरियाणा एवं क्षेत्रीय निदेशक, पानीपत जोन द्वारा की गई। कार्यक्रम में ब्रह्मा के रूप में ब्रह्म महाविद्यालय हिसार के प्राचार्य प्रमोद योगार्थी विद्यमान रहे। कार्यक्रम में डी.ए.वी. फतेहाबाद के प्रबन्धक अजय अहलाबादी ने भी शिरकत की। डी.ए.वी की लोकल मनैजिंग कमेटी के सदस्य विरेन्द्र लाठर सपत्नी उपस्थित थे। उक्त कार्यक्रम में बच्चों ने सांस्कृतिक कार्यक्रमों के तहत स्वामी श्रद्धानन्द की वीर गाथा गाई जिसकी दर्शकों ने मुक्त कंठ से प्रशंसा की।

यजमान रूप में उपस्थित अभिभावकों में माता–पिता, दादा–दानी, नाना–नानी ने विद्यालय के प्रांगण में यज्ञ वेदियों पर विराजमान थे। इस अवसर पर विद्यालय में बच्चों के सहयोग से प्रतिमाह दान स्वरूप दिए गए एक–एक रूपए की एकत्रित धनराशि से दयानन्द ब्राह्म विद्यालय हिसार के ब्रह्मचारियों के लिए 11 क्विंटल चावल दान स्वरूप दिए गए।

भजनोपदेशक सुनिल आर्य ने अपने भजनों से सबको आनंदित कर किया। मुख्य अतिथि सत्यपाल आर्य ने कहा कि हम अपनी प्राचीन संस्कृति को भुला बैठे हैं, सो आज के युग में इस प्रकार के आयोजन करना अत्यन्त आवश्यक है। इस अवसर पर अध्यक्ष महोदय डॉ. धर्मदेव विद्यार्थी ने यज्ञ की महत्ता एवम् स्वामी श्रद्धानन्द बलिदान दिवस पर प्रकाश डालते हुए कहा कि हमें ऐसे महापुरुषों के जीवन से प्रेरणा लेनी चाहिए।

प्राचार्य हरेशपाल पांचाल ने यज्ञमान के रूप में उपस्थित सभी अभिभावकों व अध्यापकवृन्द का हार्दिक धन्यवाद व्यक्त किया व उनको स्मृति चिह्न प्रदान कर सम्मानित किया। उन्होंने बताया कि आयोजकों द्वारा 111 कुण्डीय यज्ञ करवाने का निश्चय किया गया था लेकिन लोगों की अत्यधिक श्रद्धा के परिणामस्वरूप 131 कुण्डीय यज्ञ का आयोजन करना पड़ा जो बहुत ही प्रशंसनीय रहा। विद्यालय की एन.एस.एस. व आर्य समाज की यूनिट के विद्यार्थियों न कार्यक्रम में अपना भरपूर योगदान दिया। शान्ति पाठ के साथ कार्यक्रम की समाप्ति हुई।

गणतन्त्र दिवस की शुभकामनायें

गणतन्त्र दिवस पर आर्य जगत् के सभी पाठ्कों को हार्दिक शुभकामनाएं आइऐ विश्व के इस महान गणतन्त्र को सशक्त बनाऐ

– सम्पादक

डी.ए.वी पलवल में धूमधाम से मनाई गई रजत जयंती

डी.ए.वी पब्लिक स्कूल पलवल में स्कूल के 25 वर्ष पूरे होने पर विशेष कार्यक्रम 'झंकार' का आयोजन किया गया। इस कार्यक्रम में डी.ए.वी. कॉलेज प्रंबध समिति के उपाध्यक्ष प्रबोध महाजन जी मुख्य अतिथि थे। मुख्य संसदीय सचिव हरियाणा, श्रीमति सीमा त्रिखा विशिष्ट अतिथि थीं। मुख्यमंत्री हरियाणा के राजनीतिक सलाहकार श्री दीपक मंगला जी ने कार्यक्रम की अध्यक्षता की। डॉ.डी.वी सेठी, स्कूल चैयरमेन, डा. सतीश आहूजा स्कूल मैनेजर ने अपनी उपस्थिति से 'झंकार' की शोभा बढ़ाई। इसके अलावा डी.ए.वी शहर के अनेक शिक्षाविद् एवं डी.ए.वी. के प्राचार्य इस अवसर पर उपस्थित हुए है। कार्यक्रम का शुभांरम आचार्य देशराज शुक्ला के ब्रह्मत्व में हुए यज्ञ से हुआ जिसमें डॉ. धर्मवीर सेठी, चेयरमैन संप्रनीक यजमान थे। दीप प्रज्वलन बाद बच्चों ने डी.ए.वी गान और परमपिता परमात्मा के मुख्य नाम ओ३म् वन्दना प्रस्तुत की।

मचं पर सांस्कृतिक कार्यक्रमों की धूम मच गई। स्कूल के कम से कम 700 बच्चों ने किसी न किसी कार्यक्रम में भाग लेकर 'झंकार' की शोभा में चार चाँद लगा दिए। हरियाणवी नृत्य 'म्हारो हरियाणा' व राजस्थानी नृत्य ने लोगों व दर्शकों को मंत्र मुग्ध कर दिया। सम्राट् अशोक के जीवन पर आधारित 'अहिंसा का संदेश' नामक नृत्य नाटिका प्रस्तुत की गई जिसमें बताया गया कि जीवन में प्रेम से बढ़कर कुछ भी नहीं है। और भारत ने हमेशा विश्व मे शांति की स्थापना करने में विशेष भूमिका निभायी है।

नन्हें बच्चों द्वारा प्रस्तुत नृत्यों और कलात्मक योग प्रदर्शन ने लोगों की मंत्र मुग्ध कर दिया। डी.ए.वी के पूर्व–छात्र न्याय मूर्ति शताक्षी गुप्ता, ए.सी.पी. धारणा एवं संदीप भारद्वाज का विशेष सम्मान किया गया। शिक्षा, खेल व सांस्कृतिक गतिविधियों में राज्य व राष्ट्र स्तरीय उपलब्धियों के लिए सम्मानित किया गया।

रजत जयन्ती के इस अवसर पर 25 साल से स्कूल से जुड़े अध्यापकों मंजू खन्ना, नीलम अरोडा, देशराज शुक्ला, मीनू कालडा एवं उर्मिला शर्मा को भी सम्मानित किया गया।

मुख्य अतिथि की प्रबोध महाजन जी ने कहा कि डी.ए.वी शिक्षण संस्थानों में शिक्षा के साथ–साथ संस्कार भी दिए जाते हैं। श्री दीपक मगंला जी ने कहा कि आर्य समाज के सिद्धांतो का कोई मुकाबला नही है। प्रधानाचार्य अल्कागुप्ता ने स्कूल की प्रगति रिर्पोट प्रस्तुत की। संसदीय सचिव सीमा त्रिखा ने अपने विचार प्रकट करते हुए कहा कि डी.ए.वी स्कूल एक मात्र ऐसा विद्यालय है जो कि बच्चों को किताबी शिक्षा के साथ–साथ वैदिक संस्कारी से युक्त एक अच्छा मनुष्य बनाने का भी कार्य कर रहा है। विद्यालय प्रबन्धन समिति के अध्यक्ष डा. डी.वी.सेठी जी ने डी.ए.वी की महत्ता पर प्रकाश डालते हुए बताया की डी.ए.वी का उद्देश्य विद्यार्थी को किताबी कीड़ा बनाना नहीं अपितु उसे संस्कारित करना है क्योकि शिक्षा संस्कार के बिना अधूरी है। उन्होंने विद्यालय की प्राचार्या को बधाई दी और कहा कि उनके नेतृत्व में विद्यालय शिक्षा और संस्कार के क्षेत्र में अग्रणी भूमिका निभा रहा है।

शान्तिपाठ के साथ कार्यक्रम सम्पन्न हुआ।

स्वजातीय या विजातीय ईश्वर अथवा अपने आत्मा में तत्त्वान्तर वस्तुओं से रहित एक होने से वह 'अद्वैत' है। – स. प्र. समु. १

संपादक – पूनम सूरी

आर्य जगत्
सप्ताह रविवार 24 जनवरी, 2016 से 30 जनवरी, 2016

बड़े-छोटे सबको नमः

● डॉ. रामनाथ वेदालंकार

नमो महद्भ्यो नमो अर्भकेभ्यो नमो युवभ्यो नम आशिनेभ्यः।
यजाम देवान् यदि शक्नवाम, मा ज्यायसः शंसमा वृक्षि देवाः।।

ऋग् 1.27.13

ऋषिः **आजीगर्तिः शुनः शेषः।** देवता **विश्वेदेवाः।** छन्दः **त्रिष्टुप्।**

● **(महद् भ्यः नमः)** [ज्ञान और गुणों में] महानों को नमः **(अर्भकेभ्यः नमः)** छोटों को नमः, **(युवभ्यः नमः)** युवकों को नमः, **(आशिनेभ्यः नमः)** वयोवृद्धों को नमः। **(यदि शक्नवाम)** जहाँ तक [हम] समर्थ हों **(देवान्)** विद्वानों को **(यजाम)** सत्कृत करें। **(देवाः)** हे विद्वानों! **(ज्यायसः)** अपने से बड़े के **(शंसं)** स्तवन को [मैं] **(मा आवृक्षि)** न छोड़ूँ।

●मनुष्य सामाजिक प्राणी है। उसे अन्यों के प्रति अभिवादन आदि उचित शिष्टाचार का पालन करना होता है। मैं भी बड़े छोटे सबको अभिवादन करता हूँ; कृत्रिम और दिखावटी नहीं, किन्तु अन्तर्मन से 'नमः' करता हूँ। 'नमः' का मूल अर्थ है झुकना। झुकना सिर से भी होता है, मन से भी। राजा, राज्याधिकारी, माता, पिता, गुरु, अतिथि, साधु, संन्यासी, शिशु, कुमार, विद्यार्थी, युवक, वृद्ध, स्वामी, सेवक प्रत्येक से मिलने पर हृदय में जो आदर, श्रद्धा, प्रेम, आशीर्वाद आदि के भाव उत्पन्न होते हैं, वे सब 'नमः' के अन्दर समाविष्ट हैं। अतः अभिवादन के लिए वैदिक 'नमस्ते' शब्द अत्यन्त हृदय-ग्राही और उपयुक्त है। जब छोटे बड़े को 'नमस्ते' कहने में पारस्परिक सौहार्द और एक-दूसरे की उन्नति की कामना व्यक्त होती है। साथ ही 'नमः' में केवल शुभकामना ही नहीं, प्रत्युत बड़े-छोटे सबके प्रति कर्तव्य-पालन का भाव भी निहित है।

हे राष्ट्र के विद्यावृद्ध और गुणवृद्ध महान् नर-नारियों! हे उपदेशामृत-वर्षा से जनता को तृप्त करनेवाले वीतराग संन्यासियो! हे विद्वच्छिरोमणि तपोनिष्ठ वानप्रस्थ आचार्यो! हे देश के लिए प्राणों का उत्सर्ग करने को उद्यत महावीरों! हे जनता-जनार्दन की सेवा में तत्पर महापुरुषों! 'तुम्हें नमः'। हे निश्छल भावभंगियों और बाल-क्रीड़ाओं से मन को मुदित करने वाले अबोध शिशुओं! हे अल्पवयस्क कुमारो! हे गुरु के अधीन विद्याध्ययन में रत तपस्वी, व्रती ब्रह्मचारियों! तुम्हें 'नमः'। हे अपने संकल्प-बल से भूमि आकाश को झुका देनेवाले बली, साहसी, ओजस्वी, विजयी युवको! तुम्हें 'नमः'। हे परिपक्व, धीर, गम्भीर, अनुभवी, धन्य, वन्दनीय, वयोवृद्ध जनो! तुम्हें 'नमः'।

समस्त बालक, युवक, वृद्ध मेरे अर्चनीय देव हैं। जहाँ तक सम्भव होगा, मैं इन्हें स्नेह-सत्कार दूँगा, इनकी सेवा करूँगा। यह भी ध्यान रखूँगा। यह भी ध्यान रखूँगा कि जो मुझसे बड़े हैं, उनकी शंसना में, उनके उपकार के प्रति कृतज्ञता-ज्ञापन में मुझसे कोई त्रुटि न हो।

❑

वेद मंजरी से

इस अंक में प्रकाशित सभी लेखों में व्यक्त भावों व विचारों के लिए लेखक स्वयं उत्तरदायी हैं और इसमें किसी आपत्तिजनक बात के लिए 'सम्पादक' एवं 'आर्य जगत्' उत्तरदायी नहीं होगा।

प्रभु-भक्ति

● खुशहालचन्द

पिछले अंक से महात्मा आनन्द स्वामी द्वारा लिखित 'प्रभुभक्ति' नामक पुस्तक को धारावाहिक रूप में प्रस्तुत करना आरम्भ किया है। महात्मा नारायण स्वामी जी द्वारा लिखित प्रस्तावना हमने पढ़ी। मनुष्य के कर्तव्यों को शारीरिक, सामाजिक और आत्मिक उन्नति का उपाय बताकर इन विभागों का विवरण दिया।

आत्मिक उन्नति अथवा ईश्वर के सम्बन्ध में किए जाने वाले कर्तव्य के प्रसंग में महात्मा जी ने लिखा कि आत्मा में शक्ति और बल लाने के पांच साधन है।

इस प्रस्तावना से लाला खुशहाल चन्द जी (महात्मा आनन्द स्वामी) के विशुद्ध आर्य जीवन जीने वाले परिवार और भक्ति मार्ग में उनके अभिनिवेश की अमूल्य जानकारी मिलती है। ''कौन लोग हैं जो भक्ति से वंचित रह जाते हैं?'' इस विषय में पाठकों का विशेष ध्यान आकृष्ट किया गया है।

अब आगे पढ़ें लाला खुशहालचन्द द्वारा लिखित निवेदन

निवेदन

जीवन के उस आरम्भिक काल में जबकि साधारण बालक रात की काली चादर ओढ़कर माँ की मीठी थपकियों में सो जाना पसन्द करते हैं, मैं उन नीरव-निस्तब्ध रातों में, जब सब लोग सो जाते थे, गायत्री माँ की लोरियाँ सुना करता था। बच्चों के लिए खेल-कूद भी बहुत आकर्षण रखते हैं, परन्तु मेरे लिए तो यही आकर्षण सबसे बढ़कर रहा कि मैं गायत्री माँ की मृदुल गोद में खेला करूँ।

मैं खिन्न रहता था-संसार से निराश! आठ-नौ वर्ष की अल्पायु में ही मैंने अनुभव किया कि मेरा जीना निरर्थक है। संसार की कोई सूनी छोर खोजकर मैं रोया करता और अपनी मूक भाषा में अपने गाँव से परे दीखती उन काली पहाड़ियों से पूछता-मेरे से कोई भी क्यों प्रसन्न नहीं है? अध्यापक, मित्र, सगे-सम्बन्धी और दूसरे क्यों मेरे साथ प्रेम-व्यवहार नहीं करते? वे पहाड़ियाँ निर्जीव थीं, निश्चल और निष्प्राण। वे मेरे प्रश्न का उत्तर न दे सकती थीं, न देतीं। परन्तु एक दिन मेरी सजल आँखों को देखकर, मेरे मुर्झाये चेहरे को देखकर स्वर्गीय स्वामी नित्यानन्द जी ने, जो उन दिनों हमारे गाँव 'जलालपुर जट्टाँ' में पधारे थे, मुझसे इसका कारण पूछा।

मैंने कहा-"मेरा जीना निरर्थक है। मुझसे कोई भी प्रसन्न नहीं। किसी भी विषय में मेरा प्रवेश नहीं। ऐसे जीने का लाभ?"

स्वामी जी ने मेरे टूटे दिल को ढाढ़स बँधाया। मुझे आश्वासन देते हुए बोले-"निराश न हो। हम तुम्हें एक उपाय बताते हैं। उसका सेवन करो। तुम्हारे संतप्त हृदय को शान्ति मिलेगी, सब शोक और विघ्न-बाधाएँ दूर हो जायेंगे।"

मैंने बालू के कणों में पानी की मिठास का अनुभव किया। इस अन्धकारमय संसार में उज्ज्वल ज्योति का मधुर आभास पाया। मैंने तिनके का सहारा लेते हुए कहा-"बताइये, आपकी अनुकम्पा!'' और जब उनकी आज्ञानुसार मैं कागज़ का एक पन्ना ले आया तो स्वामी जी ने उस पर गायत्री-मन्त्र लिख दिया। गायत्री-मन्त्र मुझे पहले ही कण्ठस्थ था, किन्तु उस दिन उसे देखकर मेरी आँखें एक अद्भुत ज्योति से चमक उठीं।

तब उन्होंने मुझे इसके अर्थ बतलाते हुए कहा-"जब घर के सब लोग सो जायँ, तब उठकर इस मन्त्र का जाप किया करो।"

इस घटना को आज लगभग 44 वर्ष हो चुके हैं, किन्तु मुझे एक ऐसा दिन स्मरण नहीं, जब मैं गायत्री माँ की पवित्र गोद में न बैठा हूँ। इस जाप से मेरे निराश हृदय को आशा मिली, मेरे खिन्न चित्त को रस मिला और मुझ अशान्त को शान्ति का महासागर! ज्यों-ज्यों मैं इस मन्त्र का जाप करता गया, मेरी रुचि प्रभु-भक्ति की ओर उत्तरोत्तर बढ़ती गई। प्रत्येक मन्त्र मेरे ऊपर अपना नया रंग छोड़ता गया और धीरे-धीरे मैं उसमें इतना रँग गया कि मुझे संसार की किसी दूसरी वस्तु में उससे अधिक आकर्षण नहीं दीख पड़ा।

भगवान् की अपार कृपा से मेरा जन्म ऐसे माता-पिता के घर में हुआ, जो सच्चा आर्य-जीवन व्यतीत करनेवाले प्रभु-भक्त हैं। उनके शिक्षण और पोषण ने मेरे अन्दर प्रभु-भक्ति का भाव कूट-कूटकर भर दिया। इस पर भी जो कृपा हुई, तो मुझे इस संसार-यात्रा में जीवन-सङ्गिनी भी प्रभु-भक्ति के रङ्ग में रँगी हुई एक देवी ही मिली। विवाह के पश्चात् मेरे भक्ति-भाव को इस देवी ने और भी तीव्र कर दिया।

सहधर्मिणी के बाद सन्तान भी प्रभु–भक्त ही मिली। मैं तो चारों ओर से प्रभु–भक्ति और प्रभु–विश्वास से ओत–प्रोत हो गया। और जब 1907 में श्री पूज्य महात्मा हंसराज जी के साथ संसर्ग हुआ तो प्रभु–प्रेम पर एक और अनोखा रंग चढ़ गया। इसके पश्चात् मुझे जो सम्बन्धी मिले, जो धर्मपुत्र और धर्मपुत्री भी मिले, ये भी प्रभु के सच्चे भक्त। इसी प्रकार मुझे मित्र भी वही मिले जो प्रभु–भक्ति के रंग में रँगे हुए थे।

ऐसा अनुकूल वातावरण पाकर प्रभु–भक्ति का रंग दिन–प्रतिदिन गूढ़ ही होता चला गया। जीवन में समय–समय पर परिवार, सम्बन्धियों तथा मित्रों की ओर से पूर्ण सुभीता होने से मुझे इस मार्ग पर अग्रसर होने में बड़ी सहायता मिली। और जब मेरे भाग्योदय की घड़ी निकट आ पहुँची तो फिर गुरु भी अचानक ही मिल गये। उन्होंने स्वयं मेरा हाथ थाम, मुझे भगवान् के सम्मुख बिठाकर उसकी झलक दिखा दी। जब कभी भी मैं एकाकी होकर अपने जीवन की अद्‌भुत घटनाओं पर विचार करता हूँ तो मुझे इन सबके भीतर मेरी प्रिय माता 'वेद–माता' का ही हाथ निहित नज़र आता है। मैं कुछ भी नहीं हूँ सिवाय इसके कि गायत्री माँ की कृपा का पात्र हूँ। मैंने जो कुछ भी पाया है, उसी के आशीर्वाद से पाया है।

यह कथा वर्णन करने का अभिप्राय यही है कि वे बालक–बालिकायें, युवक–युवतियाँ तथा वृद्ध–वृद्धायें, और जो मेरी तरह आतुर और आकुल हो रहे हों, मेरे जीवन की इस सत्य रामकहानी से कोई लाभ उठा सकें। वे ठोकरें खाने की बजाय एक निश्चित और सफल मार्ग की ओर अग्रसर हों।

हैदराबाद के धार्मिक संग्राम के सम्बन्ध में डेढ़ वर्ष के लिए कारागार में आकर मेरे मन में यह विचार उत्पन्न हुआ कि इस जेलयात्रा का 'प्रसाद' अपने भाई–बहनों को क्या दूँ? सौभाग्य से जेल (गुलबर्गा जेल) में मैं बन्दी था, उसी जेल में श्री पूज्य महात्मा नारायण स्वामी जी महाराज भी बन्दी थे। उनके सत्सङ्ग में रहते हुए और प्रतिदिन उपनिषदों के रहस्य सुनते हुए मेरी अन्तरात्मा से यही ध्वनि प्रतिध्वनित हुई कि 'प्रभु–भक्ति' का ही प्रसाद उपयुक्त होगा। लेकिन मैं प्रसाद देनेवाला कौन? मेरे पास रखा ही क्या है? यह तो उसी की कृपा का प्रसाद है। उसी की आज्ञा से आपके सम्मुख रख रहा हूँ। अच्छा लगे–न लगे, भाये–न भाये, यह प्रेम की भेंट है, स्वीकार कीजिये!

भक्तों के चरणों की रज–समान
खुशहालचन्द
सैंट्रल जेल, गुलबर्गा
प्रथम वैशाख, 1996
13 अप्रैल, 1936

रामकहानी

लगभग 333 वर्ष पूर्व इतिहास की एक करुणाजनक घटना क्या फिर घटेगी? क्या एक बार फिर प्रभु–भक्त सन्त तुकाराम की भाँति मुझे भी अनशन करना होगा?–यह प्रश्न तब मेरे सामने उपस्थित हुआ, जब गुलबर्गा सेंट्रल जेल के सुपरिण्टेण्डेण्ट ने मेरी पुस्तक वापस देने में आनाकानी की। वह घटना इस प्रकार है–यह पुस्तक तैयार हो चुकी थी। जेल में ही श्री पूज्य महात्मा नारायण स्वामी जी ने प्रस्तावना भी लिख दी। एक दिन जेल के सुपरिण्टेण्डेण्ट साहब आये और कहने लगे–"आपने जो पुस्तक लिखी है, वह मुझे दें ताकि देख लूँ कि उसमें क्या लिखा है। दूसरे, जेल में पुस्तक लिखने की आज्ञा नहीं है।" मैंने कहा–"जब पुस्तक लिखना आरम्भ किया था, तब आपको मैंने बता दिया था और उसके बाद कई बार मैंने आपको बताया कि पुस्तक लिखा जा रहा है। यदि आज्ञा न थी तो उस समय मुझे क्यों नहीं रोक दिया गया? दूसरे, जेलों में पुस्तक लिखे ही जाते रहे हैं। लोकमान्य तिलक ने 'गीता–रहस्य' जेल ही में तो लिखा था! श्री लाला लाजपतराय ने भी 'भारत का इतिहास' धर्मशाला जेल में लिखा था और पण्डित जवाहरलाल जी ने भी विश्व–इतिहास के सम्बन्ध में एक बड़ा पुस्तक नैनी जेल ही में ता लिखा! परन्तु रियासत हैदराबाद के रंग अनोखे हैं।" लेकिन वह 'प्रभु–भक्ति' यह कहकर ले गये कि देखें, उसमें क्या लिखा है। मैंने कहा–"केवल ईश्वर की भक्ति के सम्बन्ध में लिखा है।" उन्होंने यह भी कहा कि वह उसे अपने ही पास सुरक्षित रखेंगे।

पूर्वोक्त बात को पाँच सप्ताह हो चुके थे। छठा सप्ताह भी जा रहा था और पुस्तक मुझे वापस नहीं मिली। तब मैंने एक दिन सुपरिण्टेण्डेण्ट से कहा कि 'प्रभु–भक्ति' की पाण्डुलिपि मुझे वापस मिलनी चाहिए। परन्तु इसका उत्तर यह मिला कि पुस्तक हैदराबाद के बड़े दफ्तर में भेज दी गई है। मैंने कहा–"आपने तो अपने ही पास रखने का वचन देकर वह पुस्तक ली थी?" तभी वह हाकिमाना लहजे में बोले–"आपने पुस्तक लिखी ही क्यों? इसकी आज्ञा न थी; अब आपसे कलम भी ले ली जायेगी।" यह सुनकर और यह विचार कर कि मेरी पुस्तक 'तलफ़' कर दी जायगी, उसी समय मेरी आँखों के सामने आज से लगभग 333 वर्ष पहले का एक दृश्य उपस्थित हो गया।

यही दक्षिण देश था। यहीं भगवान् के एक प्यारे सन्त तुकाराम रहते थे। उन्होंने भगवान् की भक्ति की तरङ्ग में कितने ही भजन लिख डाले। उन्हें 'अभङ्ग' का नाम दिया जाता है। उन भजनों ने सारे महाराष्ट्र में धूम मचाई। भक्त लोग झूम–झूमकर गाते और नाचते। परन्तु एक 'आँख' को प्रभु–प्रेमियों का यह संगीत नहीं भाया। उसने एक नीचतापूर्ण चाल चलकर संत तुकाराम के भजनों की सारी पुस्तकें उनसे ले लीं और कह दिया कि पुस्तकें इन्द्रायणी नदी में फिंकवा दी गई हैं। सन्त तुकाराम के हृदय पर इससे गहरी चोट लगी। उनका दिल टूट गया। वह इन्द्रायणी नदी के तट पर एक मन्दिर के सामने बैठ गये और प्रतिज्ञा कर ली–'जब तक मेरी सारी पुस्तकें मुझे नहीं मिलेंगी, मैं अन्न–जल ग्रहण नहीं करूँगा।' प्रभु के प्यारे ने अनशन आरम्भ कर दिया। एक–एक करके बारह दिन बीत गये। अन्त में तेरहवें दिन जब उनकी अवस्था बहुत बिगड़ने लगी तो उनकी पुस्तकें उन्हें वापस दे दी गईं।

यह दृश्य मेरी आँखों के सामने विद्युत् के समान आया और चला गया। मैंने जेल के सुपरिण्टेण्डेण्ट साहब से कहा– "आपने अपना वचन भंग किया है, आपने पुस्तक केवल अपने पास रखने और देखने के लिए ली थी। उसे हैदराबाद भेजकर आपने उचित नहीं किया। और मेरी कलम ले लेने की जो बात कही है, उसकी मुझे कोई चिन्ता नहीं। मैं आज ही से सब सुभीतों पर लात मारता हूँ और एक साधारण कैदी की तरह रहना शुरू करता हूँ। और आपसे यह कहे देता हूँ कि आज तेरह जुलाई है, यदि मेरी पुस्तक 19 जुलाई तक न दी गई तो मैं बीस जुलाई से अनशन–व्रत करके अपने प्राण त्याग दूँगा। मैं ऐसे लोगों के रहम पर जीना पसन्द नहीं करता, जो अपना वचन–भंग करते हैं और प्रभु–भक्ति की पुस्तक को भी जब्त कर लेते हैं।" यह कहकर मैंने अपने वस्त्र तत्काल उतार डाले और जेल के भगवे वस्त्र पहन लिये। सोने के लिए भूमि पर ही टाट बिछा लिया और भगवान् से प्रार्थना करने लगा।

मेरे साथ सहानुभूति रखते हुए सत्याग्रही लाला मुरलीलाल जी रिटायर्ड सेशन जज पंजाब और महाशय ठाकुरदास जी वानप्रस्थी हलदौर–निवासी ने भी ऐसा ही किया। पूर्ण अनशन बीस जुलाई से करना था, लेकिन मैंने उसकी तैयारी चौदह तारीख से आरम्भ कर दी। मैं ज्वार की रोटी के केवल पाँच ग्रास 24 घण्टों में खाता। पाँचों प्राणों को सन्तुष्ट करने के लिए 'ओम् प्राणाय स्वाहा, व्यानाय स्वाहा, अपानाय स्वाहा, समानाय स्वाहा, उदानाय स्वाहा' कह पेट के हवनकुण्ड में पाँच आहुतियाँ डाल देता। एक, दो, तीन, चार, पाँच दिन इसी प्रकार बीत गए। मैंने तैयारी के उन दिनों में देख लिया कि जेल–निवास से, जेल के रद्‌दी भोजन और प्रतिकूल जलवायु से जो नाना प्रकार के रोग हो जाते हैं, उनसे जो निर्बलता हो गई है, उसे सम्मुख रखकर अनशन आरम्भ करने के पश्चात् दस या पन्द्रह दिन तो मैं जीवित रह ही सकूँगा। छठा दिन भी आ पहुँचा। हवन–यज्ञ के पश्चात् मैंने अपने सत्याग्रही कैदियों से निवेदन किया कि वे मुझे अकेले ही अनशन करने दें। यदि वे भी अनशन करेंगे तो मुझे बहुत कष्ट होगा। उस दिन भी अपने पेट को खाली रखा। इस प्रकार से ये दिन अनशन में ही गुज़रे। परन्तु सुपरिण्टेण्डेण्ट को यह पता था कि भूख–हड़ताल बीस तारीख़ को आरम्भ होगी। उन्नीस जुलाई सायंकाल के समय जबकि मैं अपनी कोठरी में बैठा प्रभु का भजन कर रहा था तो महात्मा नारायण स्वामी जी ने मुझे बाहर बुलाया। सुपरिण्टेण्डेण्ट साहब भी पास ही बैठे थे। मेरी पुस्तक की पाण्डुलिपि उनके हाथ में थी। मैं करीब गया तो उन्होंने वह मुझे लौटा दी। इसी प्रकार लगभग 333 वर्ष के पश्चात् दक्षिण देश में एक बार फिर तुकाराम की बात स्मरण हो गई।

मैंने जेल में तीन बार भूख–हड़ताल की और प्रभु–कृपा से तीनों बार मुझे सफलता प्राप्त हुई। बाकी दो का सम्बन्ध 'प्रभु–भक्ति' से नहीं था, सत्याग्रहियों के कष्टों का निवारण करने और उनसे जेलवालों के अमानुषिक व्यवहार का विरोध करने से था। अतएव उनका वर्णन नहीं करता।

भक्तों का दासानुदास
खुशहालचन्द
सैण्ट्रल जेल गुलबर्गा, 20 जुलाई, 1939

शेष अगले अंक में....

यह दृश्य मेरी आँखों के सामने विद्युत् के समान आया और चला गया। मैंने जेल के सुपरिण्टेण्डेण्ट साहब से कहा– "आपने अपना वचन भंग किया है, आपने पुस्तक केवल अपने पास रखने और देखने के लिए ली थी। उसे हैदराबाद भेजकर आपने उचित नहीं किया। और मेरी कलम ले लेने की जो बात कही है, उसकी मुझे कोई चिन्ता नहीं। मैं आज ही से सब सुभीतों पर लात मारता हूँ और एक साधारण कैदी की तरह रहना शुरू करता हूँ। और आपसे यह कहे देता हूँ कि आज तेरह जुलाई है, यदि मेरी पुस्तक 19 जुलाई तक न दी गई तो मैं बीस जुलाई से अनशन–व्रत करके अपने प्राण त्याग दूँगा। मैं ऐसे लोगों के रहम पर जीना पसन्द नहीं करता, जो अपना वचन–भंग करते हैं और प्रभु–भक्ति की पुस्तक को भी जब्त कर लेते हैं।" यह कहकर मैंने अपने वस्त्र तत्काल उतार डाले और जेल के भगवे वस्त्र पहन लिये। सोने के लिए भूमि पर ही टाट बिछा लिया और भगवान् से प्रार्थना करने लगा।

प्रश्नोत्तर

● श्री हरिश्चन्द्र वर्मा 'वैदिक'

प्रश्न– क्या ईश्वर निराकार है? यदि उसका कोई आकार नहीं है तो वह कैसे शक्तिमान और सामर्थ्यवान हो सकता है? ऐसा लगता है कि ईश्वर एक विश्वास है।

उत्तर– निराकार उसे कहते हैं जिसका कोई स्थूल आकार न हो– जैसे **'चैतन्य'**! ईश्वर तो प्रकृति से भी सूक्ष्म है। वह परमाणुओं का कोई कण भी नहीं परन्तु प्रत्येक कणों में जो गति एवं गुण होते हैं उन्हें आदि सृष्टि के पहले ही ईश्वर की तपः एवं ऋत शक्ति से प्राप्त हो गई थी, उसके पहले वे सारे कण अद्रव्यमान एवं निष्क्रिय थे। जब उन्हें शक्तियाँ प्राप्त हुईं तब वे विधि विज्ञान पूर्वक नियम से एकत्रित होकर विभिन्न प्रकार के सृष्टियों के कार्य–कारण बनने लगे।

ऋषि दयानन्द ने ईश्वर, जीव और प्रकृति को सृष्टियों का मूलतत्व माना है। प्रकृति को सृष्टि रचने की सामग्री **'उपादान कारण'**, उससे सूक्ष्म जीवात्मा को शरीरधारी प्राणियों का अधिष्ठाता **'साधारण कारण'** और उससे भी अतिसूक्ष्म प्रकृति के परमाणुओं से परे, अग्नि के समान व्यापक सर्व सामर्थ्यवान परमेश्वर को **'निमित्त कारण'** कहा गया है। ईश्वर एक ऐसा महान तत्त्व है जिसमें सर्वज्ञता का भी गुण है। उपनिषद एवं वेद ने ईश्वर को आत्मा से भी सूक्ष्म माना है।

देखिये वेद भी कहता है:– **अभी षतस्तदा भरेन्द्र**
ज्यायः कनीयसः।
पुरुवसुर्हि मघवन्त्सनादसि भरे–भरे व हव्यः।।
(ऋ.7,32,24)

जो परमात्मा सूक्ष्म से सूक्ष्म, महान् से महान् सनातन, (प्राण के समान) सर्वाधार, सर्वव्यापक और सबके द्वारा उपासना करने योग्य है, उसी का आश्रय सब लोग करें।

यह सभी जानते हैं कि एटम का कण जितना सूक्ष्म होता है उतना ही शक्तिशाली होता है। उसी प्रकार परमेश्वर सर्वशक्तिमान और सर्व उत्तम गुणों से सम्पन्न इसलिये है कि उससे सूक्ष्म कोई भी नहीं है, प्रकृति भी नहीं। इसलिये वह सब में प्राण के समान व्याप्तमान है, तभी तो उसके प्रतिभा रुपी नियम से प्रकृति के सारे कण क्रियाशील है (ये कण परमाणु एवं उससे भी सूक्ष्म होते हैं) उन्हीं से जिनको परमेश्वर ने अपनी नियम शक्तियों द्वारा एकत्रित करके सारी सृष्टियों की रचना की है।

देखिये वेद प्रमाण – **विश्वतश्चक्षुरुत विश्व तो**
मुखोविश्वतो बाहुरुत विश्वतस्यात्।
सं बाहुभ्यांधमति सं पतत्रैर्धावा भूमी जनयन् देव
एकः।। (यजु. 17.19)

जो सूक्ष्म से सूक्ष्म, महान् से महान्, आकार रहित, अनन्त सामर्थ्य वाला और सर्वव्यापक देव अद्वितीय परमात्मा है, वही अतिसूक्ष्म कारण प्रकृति से स्थूल कार्य जगत् को रचने और नष्ट करने में समर्थ है। जो उसकी उपासना को छोड़कर अन्य की उपासना करता है, उससे भिन्न संसार में अन्य कौन अभागा है?

देखिये चैतन्यता और ज्ञान निरवयव है, किन्तु मानव उसी के माध्यम से शिक्षा और विद्या से वैज्ञानिक बन जाता है तब नये–नये दूरदर्शन, कम्प्यूटर आदि यन्त्र एवं जल–थल–वायुयान का निर्माण कर देता है। तात्पर्य यह कि मूलतत्त्व चैतन्यता में देखिये कितनी बड़ी शक्ति है जिसकी बुद्धि ने अपने शरीर साधनों एवं विभिन्न प्रकार के पदार्थों से बड़े–बड़े पुल और कई मंजिला मकानों का निर्माण कर दिया है।

विज्ञान स्वरूप ईश्वर ने मानव मस्तिष्क का निर्माण क्यों किया? इसलिये कि आत्मा अपने ज्ञातृत्व गुणों को उसके द्वारा सारे कार्यों को कर सके और सृष्टिकर्ता के रहस्यमयी रचनाओं को देखे, जाने और खोज करे कि पंचतत्व एवं सूर्य चन्द्रादि की रचना कैसे, कब और क्यों हुई? और एक विशेष बात यह है कि परमात्मा मानव जैसा न चेतन है, न अल्पज्ञ, न परिच्छिन्न और न अल्प सामर्थ्य वाला है। वह परमात्मा ज्ञान स्वरूप–सर्वज्ञ अति सूक्ष्म, प्राण के समान व्यापक और समर्थवान है वह किसी भी यन्त्र से दृष्टिगोचर होने वाला नहीं है, क्योंकि वह कोई प्रकृति कण नहीं है, किन्तु बुद्धिपूर्वक मानव का मस्तिष्क एवं ज्ञानेन्द्रियों, कर्मेन्द्रियों की रचना तथा उनके में स्वाभाविक ज्ञान के अलावा नैमित्तिक ज्ञान के लिये ऋषियों द्वारा वेद–विद्या और भाषा की रचनाओं को देखकर परमात्मा का ज्ञान होना स्वाभाविक है। प्रकाश की, पंचतत्वों की, चुम्बकीय ध्वनि तरंगों की, विद्युत की, ये सारे के सारे सृष्टि तत्वों के सूक्ष्म से सूक्ष्म कणों की शक्तियाँ हैं जो सारे विश्व में क्रियाशील हैं। तभी तो आत्मा के योग से अपने जीवित शरीर में मनुष्य इन्द्रियों का केन्द्र मस्तिष्क के होने से उसके द्वारा विचार किरता है, मन द्वारा मनन करता है, नेत्र द्वारा रूप देखता है, कान द्वारा सुनता है, त्वचा द्वारा स्पर्श का ज्ञान करता है, रसना द्वारा रसों को जानता और बोलता है, नाक द्वारा प्राणापान एवं गन्ध–सुगंध का बोध करता है।

चेतन, प्रेम, आनन्द, ममत्व, इच्छा, स्मरण और ज्ञानादि के कोई परमाणु नहीं होते। ये सब उनसे परे आत्मा के गुण हैं और आत्मा कोई जड़ कण नहीं है। वह अमिश्रित अति सूक्ष्म द्रव्य है, उसका परिवर्तन नहीं होता, पर उसकी गति अवश्य है क्योंकि वह सूक्ष्म शरीर से एक स्थूल शरीर को छोड़कर दूसरे शरीर को धारण करता है और आयु के अनुसार शरीर में रहकर अपने कर्मों को, मन, बुद्धि, मस्तिष्क और इन्द्रियों के साधनों द्वारा करता रहता है।

प्रश्न– कतिपय वैज्ञानिक जन 'आत्मा' को क्यों नहीं मानते, जबकि उसका अस्तित्व भी है?

उत्तर– वैज्ञानिक जन आध्यात्मिक विज्ञान के संबंध में अंधे हैं। (यदि वे लोग ईसाई धर्मग्रन्थों को छोड़कर, वैदिक ग्रंथों को देखते तो उन्हें ज्ञात हो जाता कि वैदिक शास्त्र कितना विज्ञान संगत है) वे लोग केवल भौतिक जड़ कणों को ही मानते हैं और ईश्वरीय सृष्टि रहस्यों के खोज में लगे हुए हैं। उनको शायद पता है कि नहीं हम नहीं जानते पर यह सत्य है कि परमाणुओं के गर्भ में अनेक कणों के रहस्य छिपे हुए हैं, जिनकी खोज वे लोग 'जेनेवा में स्थापित महामशीन' द्वारा कर रहे हैं। अभी हाल ही में (न्यूट्रानों की टक्कर से) एक गॉडपार्टिकल, सृजनकारक कण का आविष्कार हुआ है, जो प्रकाश की गति से कई गुणा तीव्र है। उन लोगों का विश्वास है कि वही विशेष कण अन्य परमाणुओं को द्रव्यमान बनाया है, जिससे उन्होंने उसे भगवान का कण कह दिया है। इस प्रकार खोज करते रहेंगे और उनके सामने नये–नये तथ्य आते रहेंगे उस विशेष कण को भगवान का कण कह देना उचित नहीं, क्योंकि ईश्वर किसी का कण नहीं है।

वह सत्, चित्त, आनन्द से युक्त, सबकी आत्माओं में सूक्ष्म प्राण के रूप में विद्यमान, सर्वव्यापक, सामर्थ्यवान सबका प्रकाशक और जो सर्वज्ञ गुणों से सम्पन्न है, वह प्रकृति से परे रहकर अपनी विशेष नियम शक्ति से विभिन्न प्रकार के परमाणुओं को द्रव्यमान बनाकर उन सबके द्वारा सारे ब्रह्माण्ड की रचना की है। योग दर्शन (1,2,7) में **'तस्यवाचकः प्रणवः'** अर्थात परमात्मा को ओम् प्रणव कहा गया है। इसलिये वह प्राणों का भी प्राण है। अतः उस प्रणव प्राणाधार को प्राण के रूप में बोध करते रहना चाहिए, इससे निर्बलता और चिन्ता तनाव दूर होते हैं। यदि वैज्ञानिक जन ईश्वर को नहीं मानते तो यह सारी सृष्टि की आदि उत्पत्ति कैसे किसी विद्या विज्ञान के द्वारा बनी? स्वयं तो बन नहीं सकती, परमाणु जड़ होते हैं– उनमें स्वयं का कुछ भी बनने का ज्ञान ही नहीं होता। इसलिये जब ईश्वरीय नियम की शक्ति उनमें प्रवेश हुई तभी उस ईश्वर के विद्या–विज्ञान द्वारा सारे विश्वादि की रचना होने लगी और हो रही है। और आत्मा का जहाँ तक प्रश्न है, तो उन्हें विचार करना चाहिये कि मानव उत्पत्ति के पूर्व, मानव का साँचा, उसके भीतर के सारे उपकरण, बाहर की दसों इन्द्रियाँ जिन सबका सम्बन्ध मस्तिष्क से है, इन सभी को कौन ऐसा महा वैज्ञानिक था, जिन्होंने आदि काल में अमैथुनी तरीके से जीवन शक्ति आत्माओं के योग से मानव आदि सारे शरीरधारी प्रणियों को उत्पन्न किया।

आज भौतिक विज्ञान की तरक्की से एक तरफ जहाँ आशीर्वाद प्राप्त हुआ है वहीं दूसरी तरफ अभिशाप भी बन गया है। उन्होंने मानव के चरित्र का निर्माण नहीं कर सका, विश्व शान्ति के लिये कोई मन्त्र नहीं बना सका। इसलिये टी.वी. चैनलों पर मॉडल सुन्दरी प्रतियोगिता एवं सिने जगत के नंगेपन से युवक–युवतियों का चरित्र नष्ट होता जा रहा है और वे भारतीय संस्कृति से दूर होते जा रहे हैं।

आज मानव, दानव बनकर शराब एवं काम क्रोध के नशे में बलात्कार, भ्रूणहत्या और हत्या कर रहा है। कुछ लोग तो हिंसक जानवर से भी बढ़ गये हैं। इसके अलावा आतंकवाद के चलते संसार की शान्ति भंग हो रही है। दूसरी तरफ कल–कारखाने चिमनियों के धुयें एवं गन्दगियों से, वायु और जल में प्रदूषण बढ़ता ही जा रहा है। वैज्ञानिकों ने खाद्यान्न पदार्थों को अधिक उत्पादन के लिये उन्हें अप्राकृतिक **'हाइब्रिड'** विषाणु युक्त एवं स्वादहीन बना दिया है, इसलिये आज सभी लोग किसी न किसी रोग से विशेषकर पेट के रोगों से ग्रस्त हैं।

इन सबके अतिरिक्त विज्ञान के अभिशाप ने ऐसे–ऐसे एटम आदि बमों का निर्माण कर दिया है कि यदि उनका प्रयोग हुआ तो सारे संसार का सर्वनाश हो जायेगा और जब धरती मानव एवं सारे प्राणियों से शून्य हो जायेगी तब फिर कभी भी, कोई भी बड़े से बड़े वैज्ञानिक तृण एवं मनुष्य को पुनः उत्पन्न नहीं कर सकेगा। इसलिये उन ब्रह्मास्त्रों को नष्ट कर दे अथवा अन्य कार्यों में उन सबका प्रयोग करें। ऐसा निरस्त्रीकरण संसार के सभी राष्ट्रों को मिलकर करना चाहिये। क्योंकि वृक्ष–वनस्पतियाँ और सारे प्राणियों तथा सर्वोत्तम मानव के पूर्वजों को अमैथुनी तरीके से ईश्वरीय शक्तियों ने (हजारो वर्षों में अनेक प्रकार के रासायनिक तत्वों एवं पंच सूक्ष्म भूतों, सूर्य के प्रकाश और सूक्ष्म शरीर के साथ आत्माओं के योग से) सृष्टि की आदि में एक ही बार उत्पन्न की थी, इसलिये इस स्वर्ग जैसे संसार को नष्ट न होने दें। सभी राष्ट्र परस्पर मैत्री भाव से रहें और प्राकृतिक दैवी शक्तियों को प्रदूषणों से बचाने का उपाय करें।

आत्मा का स्थान मस्तिष्क है और प्राण का स्थान हृदय है। ईश्वरीय विद्या अर्थात साँचा के अनुसार भ्रूण में सूक्ष्म प्राण के द्वारा जब हृदय (फेफड़ा) और मस्तिष्क बनने लगता है तब उस सूक्ष्म शरीर में विद्यमान (मौलिक प्राण से भी सूक्ष्म आत्मा का मस्तिष्क से सम्बन्ध (निर्धारित आयु के अनुसार) हो जाता है। गर्भ के प्रथम अवस्था में जीव सुषुप्ति में रहता है। जब उसके सारे अंग बन जाते है, तब वह स्वप्नावस्था में होता है और जब नौ मास के बाद उसका जन्म होता है तब जागृत अवस्था में आ जाता है और जब रोता है तब शिशु का मौलिक प्राण बाहर के वायु से ऑक्सीजन को ग्रहण करने लगता है। यदि आत्मा नहीं है तो जैसे बिगड़े हुए मशीन को चालू कर दिया जाता है, वैसे ही मृत शरीर को भी रक्त और आक्सीजन आदि देकर बड़े–बड़े डाक्टर उसे क्यों नहीं पुनर्जीवित कर देते?

मु. पो. मुरारई, जिला वीरभूम
(प. बंगाल) 731219

उत्कृष्ट शंका समाधान

● स्वामी विवेकानन्द परिव्राजक

शंका–किस प्रकार के कर्मों के आधार पर स्त्री या पुरुष का जन्म मिलता है?

समाधान–भई ये पूरे–पूरे तो मुझे भी समझ में नहीं आये, तो मैं कैसे बताऊँ आपको कि कौन से कर्म करेंगे तो स्त्री बनेंगे, और कौन से कर्म करेंगे तो पुरुष बनेंगे। मुझे इतना समझ में आया कि बस अच्छे से अच्छा कर्म करो। अब भगवान बना देगा, जो बना देगा।

कई लोगों के दिमाग में यह बात बैठी हुई है, कि स्त्री जन्म अच्छा है। कई लोगों के दिमाग में यह बात बैठी है, कि पुरुष जन्म अच्छा है। जो सत्य है, वो सत्य है। सत्य को जानना चाहिये, समझना चाहिये और सत्य को खुलकर स्वीकार करना चाहिये, उससे हमारी उन्नति होती है।

वैसे तो स्त्री और पुरुष दोनों एक ही योनि में हैं, मनुष्य योनि में। मनुष्य योनि की दृष्टि से दोनों बराबर हैं। इसमें कोई ऊँचा–नीचा नहीं है। क्या बस में, रेल में आधा टिकिट लगता है और पुरुषों का पूरा लगता है? इस हिसाब से दोनों भारत के समान नागरिक हैं। सबो समान अधिकार है, वोट देने का अधिकार बराबर है। पाकिस्तान में स्त्रियों का आधा वोट है, वो मुझे पता है। वो गलत बात है। यह वेद के अनुसार अन्याय है। वेद में स्त्री और पुरुष दोनों को बराबर बताया है।

हाँ, किसी व्यावहारिक दृष्टि से किसी–किसी क्षेत्र में स्त्रियाँ ऊपर हैं, पुरुष छोटे हैं। किसी क्षेत्र में पुरुष बड़े हैं तो स्त्रियाँ छोटी हैं। वो अलग–अलग क्षेत्र हैं। कौन सा क्षेत्र है इसमें? वेद कहता है–जब बालक के साथ माता–पिता का संबंध हो, तो माता बड़ी और पिता छोटा। माता का नंबर पहला, माता सबसे पहला गुरु है। अगर पहला गुरु बुद्धिमान हो, तो बच्चा बुद्धिमान बनेगा। और पहला गुरु ही मूर्ख हो तो बच्चा मूर्ख बनेगा। तो पहला गुरु माता है, तो माता का नंबर पहला। यहाँ पुरुष छोटा और स्त्री बड़ी। यह एक क्षेत्र है।

और दूसरा क्षेत्र है, पति–पत्नी का। जब पति–पत्नी का आपस में संबंध हो, तो वहाँ पति बड़ा और पत्नी छोटी, वहाँ यह नियम है। अब बताइये क्या चाहिये आपको, एक तरफ ये (पुरुष) बड़े हैं, एक तरफ ये (स्त्रियाँ) बड़े हैं, दोनों बराबर हो गये, बात खत्म। झगड़ा–वगड़ा कुछ नहीं।

हाँ, यह ठीक है। कहीं व्यावहारिक दृष्टि से कुछ समस्यायें पुरुषों के साथ कम हैं, और स्त्रियों के साथ कुछ अधिक हैं। कुछ हमारी जिम्मेदारियाँ रहती हैं व्यवहार की। तो उसमें स्त्रियों पर बंधन अधिक रहते हैं, पुरुषों पर उतने नहीं होते हैं। पुरुष तो अकेला घूम लेगा, खा लेगा, कहीं रात को दो बजे प्लेटफार्म पर सो जायेगा, कोई पूछने वाला नहीं। वो तो अकेला ही पूरे देशभर में घूम आयेगा। पर स्त्रियों को इतनी सुविधा नहीं है। उस दृष्टि से हमको स्वीकार करना पड़ता है। बाकी तो मनुष्यता की दृष्टि से दोनों बराबर हैं। इसमें कोई ज्यादा हीन भावना (इंफीरियरिटी कॉम्पलेक्स) की जरूरत नहीं है।

स्त्रियाँ बेशक पढ़ सकती हैं। वेद में लिखा है, 'सत्यार्थ–प्रकाश' में लिखा है, महर्षि दयानंद जी ने लिखा–अगर ईश्वर का प्रयोजन स्त्रियों को पढ़ाने में न होता, तो इनके शरीर में आँख और कान क्यों रखता। वे भी वेद पढ़ सकती है, वे भी वैराग्य प्राप्त कर सकती है, वे भी संन्यास ले सकती हैं। पर वे संन्यास लेती नहीं, झगड़े करती हैं, संन्यास नहीं लेती, तो हम क्या करें। ये प्रायः झगड़ा ज्यादा करती हैं, राग–द्वेष ज्यादा करती हैं, पढ़ाई करती नहीं हैं, दोष इनका है। बाकी इनका चांस पूरा है। छूट पूरी है, ये भी पढ़ें, वेद पढ़ें। ब्रह्मचर्येण कन्या युवानं विन्दते पतिम् अर्थात् अथर्ववेद में लिखा है कि–"कन्या को भी ब्रह्मचर्य का पालन करके, वेद पढ़ने का पूरा अधिकार है। और विद्या पढ़कर फिर विवाह करना चाहिये।" तो छूट सबको है सारी। बाकी कोई करें या न करें, वो उसकी मर्जी।

स्त्रियाँ बेशक पढ़ सकती हैं। वेद में लिखा है, 'सत्यार्थ–प्रकाश' में लिखा है, महर्षि दयानंद जी ने लिखा–अगर ईश्वर का प्रयोजन स्त्रियों को पढ़ाने में न होता, तो इनके शरीर में आँख और कान क्यों रखता। वे भी वेद पढ़ सकती है, वे भी वैराग्य प्राप्त कर सकती है, वे भी संन्यास ले सकती हैं। पर वे संन्यास लेती नहीं, झगड़े करती हैं, संन्यास नहीं लेती, तो हम क्या करें। ये प्रायः झगड़ा ज्यादा करती हैं, राग–द्वेष ज्यादा करती हैं, पढ़ाई करती नहीं हैं, दोष इनका है। बाकी इनका चांस पूरा है। छूट पूरी है, ये भी पढ़ें, वेद पढ़ें। ब्रह्मचर्येण कन्या युवानं विन्दते पतिम् अर्थात् अथर्ववेद में लिखा है कि–"कन्या को भी ब्रह्मचर्य का पालन करके, वेद पढ़ने का पूरा अधिकार है। और विद्या पढ़कर फिर विवाह करना चाहिये।" तो छूट सबको है सारी। बाकी कोई करें या न करें, वो उसकी मर्जी।

शंका–जैसे कार आदि जड़ वस्तु और आँख, हाथ आदि अपने जड़ अंगों को एक बार नियंत्रित करने पर, वो पर्याप्त समय तक नियंत्रित रहते हैं। परंतु मन, जो कि जड़ है, उसको एक बार नियंत्रित करने पर भी वो बार–बार अनियंत्रित होकर हमारे ध्यान में बाधा डालता ही रहता है, ऐसा क्यों? कृपा करके समझा दें।

समाधान–एक व्यक्ति कार चला रहा है। और वो कार चलाते–चलाते एक्सीलेटर पर पाँव रखता है। और एक्सीलेटर को थोड़ा दबाता है तो कार भागती है। फिर पाँव थोड़ा पीछे खींच लेता है, तो स्पीड कम हो जाती है। और वो बार–बार ऐसे एक्सीलेटर दबाता रहे तो कार फिर ऐसे ही चलेगी न। झटके मार–मार के, फिर चलेगी, फिर स्लो हो जायेगी, फिर चलेगी, फिर स्लो हो जायेगी। अब बताइये, इसमें किसका दोष है। कार का दोष है, कि ड्राइवर का दोष है। तो आप मन को ऐसे ही करते रहते हैं। उसको बार–बार एक्सीलेटर देते रहते हैं। और कहते हैं–साहब, यह ज्यादा परेशान करता है। वास्तव में मन परेशान नहीं करता है। आप ही उसको भगाते रहते हैं। आप उसमें विचार उठाते रहते हैं, वो भागता रहता है। जैसे 'कार' जड़ है वैसे ही 'मन' जड़ है।

गलती हमारी है। हमने मन को ठीक तरह से चलाना सीखा नहीं। अब मन को चलाना भी सीख लीजिये और मन को रोकना भी सीख लीजिये। तो यह समस्या हल हो जायेगी। मन कैसे चलता है, मन में विचार कैसे आते हैं। पहला कारण है–'इच्छा' और दूसरा कारण है–'प्रयत्न'। तो लोग जब ध्यान में बैठते हैं, वो मन में दुनिया भर की इच्छायें पैदा करते रहते हैं। कपड़े खरीदने है, शॉपिंग में जाना है, फलानी पार्टी में जाना है, बच्चे की स्कूल की फीस भरनी है, कोर्ट में झगड़ा चल रहा है। वो तरह–तरह की इच्छायें पैदा करते रहते हैं। और फिर बन बातों का याद करने का प्रयत्न करते रहते हैं। इच्छा करते रहते हैं, प्रयत्न करते रहते हैं, तो मन में विचार उठते रहते हैं।

आप उन सब बातों को याद करने की इच्छा को बंद कर दो। और उन सब बातों को याद करने का प्रयत्न बंद कर दो। इच्छा भी नहीं करनी, प्रयत्न भी नहीं करना। इस तरह कोई विचार नहीं आयेगा। मन बिल्कुल आपकी इच्छा के अनुसार चलेगा।

अगर एक मिनट का प्रयोग करना हो तो अभी कर लो। हाँ जी करेंगे। आप आसन लगाइये, कमर सीधी, गर्दन सीधी, आँखें बंद। पूरी सावधानी के साथ मेरी बात को सुनें, और मन में वैसा ही सोचने का प्रयत्न करें। कल्पना कीजिये, आप अपने घर में बैठे हैं। अपने ड्राइंग रूम में, जहाँ आपके अतिथि लोग आकर बैठते हैं, उस कमरे में बैठे हैं। आपके सामने टेबल पर अखबार पड़ा है। आपने अखबार उठाया और उसकी हेडलाइन पढ़नी शुरू की। कश्मीर में बम विस्फोटः चार मृत, अठारह घायल। दूसरा समाचार–महाराष्ट्र के एक गाँव में चोरी। पाँच लाख की संपत्ति चोर लूट कर ले गये। आपने समाचार पढ़ा। इतने में दरवाजे पर घंटी बजी। आपने अखबार छोड़ दिया, उठकर के बाहर गये, दरवाजा खोला। आपके एक मित्र आये। आपने उनको नमस्ते किया, कहा–आइये, स्वागत है, बहुत दिनों बाद मिले। उनको प्रेम से अंदर लेकर आये। वहीं पर बैठाया, ड्राइंग रूम में। हालचाल पूछा, सब ठीक–ठाक है? हाँ ठीक–ठाक है। फिर उनको बैठाकर आप रसोई में गये। एक डिब्बे में से आपने चार लड्डू निकाले, प्लेट में लड्डू रखे। दो गिलास पानी भरा, और ट्रे में पानी का गिलास और लड्डू की प्लेट ले आये। उन आये हुये मित्र को लड्डू खिलाया, एक लड्डू मित्र ने खाया, एक लड्डू आपने खाया। दोनों ने थोड़ा–थोड़ा पानी पिया। दस मिनट कुछ बातचीत हुई, कुछ चर्चा हुई, उसके बाद वो मित्र जाने लगे। तो आपने प्रेम से विदाई दी। और उनको बाहर दरवाजे तक छोड़कर आये। बस, अब आप आँखें खोल सकते हैं। अब बताइये, आपने अपने मित्र को लड्डू खिलाया, कि नहीं खिलाया। खिलाया। और आपने खाया कि नहीं खाया, खाया न। अब बताइये, दूसरा विचार क्यों नहीं आया। अब नहीं आया न। अब वही विचार आया। अब तो दूसरा विचार नहीं आया। और ध्यान में दूसरा विचार क्यों आता है।

कारण पहले मैं बता चुका हूँ। लड्डू खाने में रुचि है, ईश्वर में रुचि नहीं है, गड़बड़ी यह है। लड्डू खा रखा है, पानी पी रखा है, मित्र को देख रखा है, अपना घर भी मालूम है, ड्राइंग रूम भी पता है, न्यूज पेपर भी रोज पढ़ते हैं। इन सब से हम परिचित हैं और इन चीजों में, कार्यों में खूब रुचि है। इसलिये वहाँ पर मन खूब लगता है। और ईश्वर में रुचि नहीं, ईश्वर का महत्व नहीं जानते, ईश्वर के प्रति श्रद्धा कम है, इसलिये ईश्वर का विचार मन में नहीं टिकता है। तो इस प्रयोग से पता चला, कि हमारी इच्छा से, हमारे प्रयत्न से ही मन में विचार उठते हैं। बस, तो ईश्वर के प्रति इच्छा पैदा करो, ईश्वर के प्रति रुचि बनाओ और उसको स्मरण करने का प्रयत्न करो। तो यह मन ठीक–ठीक चलेगा। कार की तरह चलेगा। फिर दूसरी बात नहीं उठायेंगे, ईश्वर की बात उठायेंगे।

दर्शन योग महाविद्यालय
रोजड़ (गुजरात)

अमृत जलाचमन

● डॉ. रूपचन्द्र दीपक

यज्ञ से पूर्व आचमन करने का विधान है। यह आचमन निम्नलिखित तीन मन्त्रों से किया जाता है–

ओम् अमृतोपस्तरणमसि स्वाहा।।1।।
ओम् अमृतापिधानमसि स्वाहा।।2।।
ओं सत्यं यशः श्रीर्मयि श्रीः श्रयतां स्वाहा।।3।।

ये मन्त्र वेद के वचन न होकर ऋषि–वचन हैं। इनका विनियोग आचमन हेतु किया जाता है। जिस प्रकार यज्ञ की भावना 'सत्यं शिवं सुन्दरम्' है, उसी प्रकार इन आचमन–मन्त्रों की भावना भी 'सत्यं शिवं सुन्दरम्' है। आइए, एक–एक करके इन पर विचार करें।

पदच्छेदः–(1) ओ३म् अमृत उपस्तरणम् असि स्वाहा। (2) ओ३म् अमृत अपिधानम् असि स्वाहा। (3) ओ३म् सत्यम् यशः श्रीः मयि श्रीः श्रयताम् स्वाहा।।

अर्थः–**(ओ३म)** यह परमात्मा का निज नाम है। ईश्वर के अनेक नाम हैं। किन्तु अन्य नाम उसके गुणों के वाचक होने से गौणिक या गौण कहलाते हैं। 'ओ३म्' उसका मुख्य नाम है। 'ओ३म्' का अर्थ 'रक्षक' है। 'अवति इति ओम्' अर्थात् जो सबकी सदा सब प्रकार से रक्षा करता है, वह ओ३म् परमात्मा है। इस नाम की प्रधानता का स्पष्ट प्रमाण है कि ईश्वर के गुणवाची नामों के आधार पर मनुष्य ने कल्पनायें करके अनेक रूप, चित्र एवं मूर्तियाँ बना ली हैं? किन्तु 'ओ३म्' की कोई मूर्त्ति, रूप या चित्र नहीं बन पाया है। परमात्मा के नाम का जाप करने में भी 'ओ३म्' नाम प्रमुख है।

(अमृत) ईश्वर अविनाशी है। वैसे तो जीव तथा अव्यक्त प्रकृति का भी नाश नहीं होता है। किन्तु अव्यक्त प्रकृति विकृत होकर व्यक्त प्रकृति का रूप लेती रहती है और जीव भी शरीर में आकर विकार अर्थात् परिवर्तन को भोगता रहता है। इसलिए इन तीनों अनादि–अनन्त तत्त्वों में ईश्वर ही प्रमुख रूप से अमृत है। वही अमरत्व अर्थात् मोक्ष का देनेहारा है। उसी का ज्ञान सारी विद्याओं का सार है। उसी का आज्ञापालन सारे अनुशासनों का मूल है। उसी की उपासना सारी अनुभूतियों का चरम बिन्दु है। उसी को सदा स्मरण रखना सारे कर्त्तव्यों का मूल है। उसी को समर्पित होकर जीना यज्ञमय जीवन का आधार है।

(उपस्तरणम्) उपस्तरणम् बिछौने को कहते हैं। ईश्वर हमारा बिछौना है अर्थात् वह हम सबका आधार है। भौतिक दृष्टि से हमारा आधार पृथ्वी, पृथ्वी का आधार जल, जल का आधार वायु, वायु का आधार अन्तरिक्ष और अन्तरिक्ष का आधार ईश्वर है। विद्या की दृष्टि से विद्यार्थी का आधार आचार्य, आचार्य का आधार ऋषि, ऋषि का आधार वेद और वेद का आधार ईश्वर है। आध्यात्मिक दृष्टि से शरीर का आधार प्राण, प्राण का आधार जीव और जीव का आधार ईश्वर है। इस सर्वाधारता की अनुभूति करने की आवश्यकता है। जो व्यक्ति सत्यनिष्ठा से ईश्वर को आधार मानकर जीता है, वह उसकी आज्ञा का पालन अवश्य करता है। ईश्वर की आज्ञा हमें दो रूपों में प्राप्त होती है–वेद की शिक्षा के रूप में और अन्तःकरण की प्रेरणा के रूप में। हम प्राणों के प्राण उस ईश्वर की इन दोनों रूपों में प्राप्त समस्त आज्ञाओं का सदा पालन किया करें।

(अपिधानम्) अपिधानम् ओढ़ने को कहते हैं। ईश्वर हमारा ओढ़ना अर्थात् आश्रयदाता है। वह हमारे पिताओं का पिता, माताओं की माता, मित्रों का मित्र, आचार्यों का आचार्य, न्यायाधीशों का न्यायाधीश और राजाओं का राजा है। वह सब दृष्टियों से सब मनुष्यों से ऊपर है। बस इसकी अनुभूति करते रहने की आवश्यकता है। जो मनुष्य सत्यनिष्ठा से ईश्वर को अपने ऊपर मानता हुआ जीता है, उसके दो लक्षण स्पष्ट हो जाते हैं। एक तो वह ऊर्ध्वगामी हो जाता है अर्थात् विद्या, गुण, सर्वोपकार आदि दृष्टियों से निरन्तर ऊँचा उठता जाता है। दूसरे, उसमें अभिमान नहीं आने पाता। यदि पहले से अभिमान आया हुआ हो तो वह नम्रता में विलीन हो जाता है। अतएव हम ईश्वर को अपना स्वामी एवं आश्रयदाता मानकर गुणवान् एवं निरभिमानी बनें।

(सत्यम्) ईश्वर सत्यस्वरूप एवं अविनाशी है। मनुष्य के लिए भी सर्वाधिक महत्त्व सत्य का ही है अर्थात् सत्य जानना, सत्य मानना, सत्य बोलना एवं सत्य करना। मनुष्य को बाल्यावस्था का सर्वप्रथम उपदेश यही दिया जाता है कि 'सत्यं वद' अर्थात् सत्य बोल। किन्तु ज्यों–ज्यों उसकी आयु बढ़ती जाती है, त्यों–त्यों वह सत्य में असत्य का मिश्रण करता जाता है और बिगाड़ को प्राप्त होता जाता है। तदुपरान्त उसको अन्तिम उपदेश भी यही दिया जाता है कि 'सत्यं वद, धर्मं चर' अर्थात् सत्य बोलता रह और सत्यरूप धर्म पर चलता रह। वस्तुतः सत्य मानवता का दूध है। जिस प्रकार बालक दुग्धपान करके बढ़ता है, उसी प्रकार मानवता सत्यपान करके बढ़ती है। सत्य के बढ़ने से नैतिकता, मानवता, विज्ञान, प्रेम, समृद्धि, सुख एवं शान्ति बढ़ती है और सत्य के घटने से ये सब घट जाते हैं। इस प्रकार सत्य की महत्ता सर्वोपरि है। इस विवेक को प्राप्त करके सब मनुष्य सदा सत्य मानें, सत्य बोलें और सत्य ही करें।

(यशः) अधिकतर मनुष्यों को यश की तीव्र कामना होती है। निःस्वार्थ भाव से परोपकार करने वाले लोगों की संख्या अति न्यून होती है। अधिकांश मनुष्य दानादि परोपकार के कर्म अच्छे नाम एवं यश के लिए करते हैं। किन्तु यह बात स्मरण रखने की है कि यश अपने आप में कोई कर्म नहीं है। यह तो कतिपय कर्मों का परिणाम है। यश मनुष्य के सदाचार का प्रतिबिम्ब है। जिस प्रकार दर्पण में मुख देखने पर उसका प्रतिबिम्ब वैसा ही दिखायी पड़ता है जैसा कि मुख होता है, उसी प्रकार समाज रूपी दर्पण में यशरूपी प्रतिबिम्ब वैसा ही बनता है जैसा कर्मरूपी मुख होता है। यदि हम मुख का प्रतिबिम्ब सुन्दर देखना चाहते हैं तो हमें मुख को सुन्दर बनाना होता है। इसी प्रकार यदि हम अच्छा यश चाहते हैं तो हमें शुभ ही शुभ कर्म करने होंगे।

(श्रीः) श्री अर्थात् सम्पत्ति एवं शोभा, ये दोनों ही मनुष्य के लिए आवश्यक हैं। मनुष्य के विचार चाहे जितने अच्छे हों, यदि उसे आवश्यक सम्पत्ति न मिले तो वह उन्हें क्रियान्वित नहीं कर पाता। अर्थात् सम्पत्ति आवश्यक है। किन्तु इतना ही आवश्यक यह है कि इस सम्पत्ति को भले साधनों से प्राप्त करना चाहिए अन्यथा एक दिन यही सम्पत्ति एक बड़ी विपत्ति बन जाती है। इसी प्रकार भली भाँति चलने पर शोभा की प्राप्ति होती है। इस शोभा को मनुष्य की सुगन्ध कहा जा सकता है। एक आर्य अर्थात् श्रेष्ठ व्यक्ति की प्रत्येक चेष्टा शोभायुक्त होती है। वह देखता है तो शोभायुक्त दृष्टि से, चलता है तो शोभायुक्त चाल से, खाता है तो शोभायुक्त ढंग से, लिखता है तो शोभायुक्त प्रकार से, बोलता है तो शोभायुक्त रीति से। आर्यत्व के दार्शनिक लक्षण चाहे जो भी हों, इसका व्यावहारिक लक्षण शोभा ही है। यदि शोभा न हो तो मनुष्य ऐसे ही भला नहीं लगता जैसे सुगन्ध न होने पर पुष्प भला नहीं लगता। अतः हम समस्त आर्यजन शोभायुक्त जीवन वाले हों।

(स्वाहा) 'स्वाहा' शब्द के अनेक अर्थ हैं। यजुर्वेद के अध्याय–2, मन्त्र–2 के दयानन्द भाष्यानुसार स्वाहा=सत्यभाषणयुक्त वाक्। निरुक्त के अनुसार स्वाहा=सु+आह+आ अर्थात् पूर्ण सत्य बात कहना अथवा स्व+आह+आ=अन्तःकरण की यथार्थ बात कहना। इन सबका सार यही हुआ कि मन–वचन–कर्म से सत्य कहने का नाम 'स्वाहा' है।

इस प्रकार इन तीनों आचमन–मन्त्रों का भाव यह हुआ कि हे ईश्वर! आप अविनाशी एवं मोक्ष देनेहार हैं। आप हम सबका आधार हैं। हम आपकी प्रत्येक आज्ञा मानेंगे। आप ही हमारे स्वामी एवं आश्रय हैं। आपके गुण–कर्म–स्वभावों में से जो जितनी मात्रा में हममें आ सकते हैं, उन्हें हम अपने में लाने का निरन्तर प्रयत्न करेंगे। आप हमें सत्य, यश एवं श्री की प्राप्ति कराकर हमारे जीवन को सार्थक कीजिए। हम सत्यपूर्वक कहते हैं कि हम यज्ञमय जीवन के लिए सदा प्रयत्नशील रहेंगे। इसी संकल्प के साथ हम जल द्वारा आचमन कर रहे हैं। इस जल के शान्ति आदि गुण हमें देकर आप हमें अमृत प्रदान कीजिए।

आर्य समाज शृंगारनगर
लखनऊ–226005
मो.9839181690

वैदिक प्रार्थना

पुनन्तु मां देवजनाः पुनन्तु मनसा धियः
पुनन्तु विश्वा भूतानि जातवेदः पुनीहि मा।। यजु. 19.39

I need cleansing and purification
of thoughts and actions
I have many failings and weaknesses
May the Enlightened One help me
cleanse and purify
my body and soul,
my mind and intellect,
my words and actions.
O Lord, make me pious and pure.

दोष मुझमें ढेर होंगे;
देवजन, ज्ञानी तपस्वी झाड़ पोंछ पवित्र कर दें
मुझे; मेरी बुद्धि, मेरा मन तथा सब कर्म मेरे
शुद्ध और पवित्र होवें।
अग्नि, जल, आकाश, पृथ्वी,
वायु, जिनसे यह बना है देह मेरा, करें निर्मल !
और प्रभु सर्वज्ञ तुम भी कलुष सब मेरे हटा कर
मुझे पूर्ण पवित्र कर दो!

स्वामी दयानन्द सरस्वती

● शिवनारायण उपाध्याय

देश में फैल रही बेरोजगारी दूर करने के लिये तथा देश में विभिन्न उद्योगों को स्थापित करने के लिये जर्मनी के एक वैज्ञानिक प्रो. जी वाइज से पत्र व्यवहार किया। छः माह तक पत्र व्यवहार चला परन्तु आर्थिक कठिनाई के कारण यहाँ से लोगों को औद्योगिक शिक्षा प्राप्त करने हेतु जर्मनी भेजा जाना संभव नहीं हो सका। लाहौर में स्थानीय व्यक्तियों की सलाह से तकनीकी शिक्षण संस्था प्रारम्भ करना तय हुआ परन्तु वह भी आपके जीवनकाल में संभव नहीं हो सका। वेद भाष्य का कार्य भी चल रहा था। समय–समय पर कई छोटी बड़ी पुस्तकें भी लिखी जा रही थीं। इनके सुव्यवस्थित प्रकाशन के लिये एक निजी प्रेस की स्वामी जी ने आवश्यकता अनुभव की। आर्य समाज मेरठ ने इस पर आर्थिक सहमति व्यक्त की। आर्य समाज फर्रुखाबाद ने भी इसमें आर्थिक सहयोग दिया।

उन्नीसवीं सदी में जन्म लेने वाले महापुरुषों में महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती का स्थान सर्वोच्च है। जन्म से वे शैव थे। शिव के प्रति उनमें बड़ी श्रद्धा तथा निष्ठा थी। परन्तु जब शिव रात्रि के पावन पर्व पर मध्यरात्रि को एक मूषक को शिव की मूर्ति पर चढ़ते और शिव को चढ़ाये गये प्रसाद को खाते हुए देखा तो वे यह सोचने को बाध्य हो गये कि जो शिव अपनी ही रक्षा एक सामान्य चूहे से नहीं कर सकता वह अपने भक्तों की रक्षा क्योंकर कर सकेगा। वास्तव में यह सच्चा शिव नहीं है; मैं सच्चे शिव की खोज करूंगा। इसी खोज में 21 वर्ष की आयु में वे घर छोड़ कर निकल पड़े। नर्मदा तट, गंगा तट और यमुना तट पर विचरण करते हुए कई योगियों से मिले, योग विद्या सीखी, विद्वानों से मिल कर संस्कृत व्याकरण तथा शास्त्रों का अध्ययन करते रहे। सभी धर्म ग्रन्थों का मनोयोग पूर्वक अध्ययन किया परन्तु सच्चे शिव का पता न लगा सके। इस प्रकार लगभग 16–17 वर्ष तक भटकने के पश्चात् पता चला कि मथुरा में स्वामी विरजानन्द सरस्वती विराजते हैं। स्वामी विरजानन्द उन्हें सच्चे शिव का दर्शन करा सकते हैं। वे तुरन्त मथुरा पहुँच कर स्वामी विरजानन्द सरस्वती जो जन्मान्ध थे, की कुटिया पर गये और अपने आने का उद्‌देश्य उन्हें बताया। स्वामी विरजानन्द सरस्वती ने उन्हें शिष्य रूप में स्वीकार किया और चार वर्ष के अध्यापन के अन्दर ही उन्हें वेदों का पारंगत विद्वान बना दिया, अविद्या अन्धकार हटा कर उन्हें सच्चे शिव परमात्मा का ज्ञान दिया तथा गुरु दक्षिणा में उनसे जीवन भर वेद के सत्य सनातन धर्म के प्रचार में संलग्न रहने की प्रतिज्ञा करा ली।

सन् 1864 से ही जब वे 40 वर्ष की अवस्था के थे सन् 1883 ई. मृत्यु पर्यन्त वे अहर्निश वेद के प्रसार–प्रसार में निरत रहे। उनकी मान्यता थी कि वेद ही सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है।

अतः जब तक संसार में वेद का प्रसार–प्रसार नहीं होगा तब तक मनुष्यों का अविद्या अन्धकार से छुटकारा नहीं मिलेगा। उन्होंने यह भी अनुभव किया कि मध्यकाल में वेदों पर जो कार्य किया गया है वह आक्षेप जनक तथा अश्लील है अतः वेद का निरुक्त निघन्टु के आधार पर नये सिरे से भाष्य किया जाना आवश्यक है और इस कार्य को सम्पन्न करने का बीड़ा स्वयं उठाया। सबसे पहले उन्होंने ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका लिखकर अपना मन्तव्य प्रकट किया कि वे किस प्रकार का भाष्य करने वाले हैं। इसकी विद्वानों द्वारा बड़ी प्रशंसा हुई। फिर नियमित रूप से वेद पर कार्य करते रहे। परन्तु उनका उद्‌देश्य अब केवल वेद का भाष्य करना ही नहीं रह गया था। वे अपने देश भ्रमण में देश की वास्तविक स्थिति जान गये थे। उन्होंने देख लिया था कि अशिक्षा के कारण देश अंध विश्वासों और कुरीतियों का पिटारा बन गया है। निर्धनता ने देश को अपने अधिकार में लिया हुआ है। विधर्मी लोग लगातार हिन्दू जाति का धर्मान्तरण कर रहे हैं। विदेशी सरकार ने देश के उद्योग धन्धों को समाप्त कर देश में बेरोजगारी फैला दी है और पूरे देश को इंग्लैण्ड से बनी वस्तुओं से ढक दिया है। स्त्रियों की दशा सबसे अधिक शोचनीय है। अतः जब तक इन समस्याओं का हल नहीं होगा तब तक सच्चे वैदिक धर्म का भी प्रचार–प्रचार असंभव है। समस्याओं का निराकरण करने के प्रयोग में उन्होंने देश में घूम–घूम कर सच्चे वैदिक धर्म का प्रचार करते हुए अपने भक्तों को शिक्षा के प्रचार–प्रसार के लिये प्रोत्साहित किया। फलस्वरूप शिक्षा संस्थाएं प्रारम्भ होने लगीं। स्त्री शिक्षा को भी महत्वपूर्ण स्थान मिला। देश में पहली बार कन्याओं को विद्यालयों में जाने का अवसर मिला। वेद के पठन हेतु गुरुकुल स्थापित करने का कार्य भी प्रारम्भ हुआ। इसी मध्य 16 दिसम्बर 1872 को स्वामी जी बंगाल की यात्रा पर पहुँचे तथा लगभग 4 माह तक बंगाल का भ्रमण करते हुए स्थान–स्थान पर वैदिक धर्म का प्रचार करते हुए, प्रसिद्ध शिक्षा शास्त्री और विद्वानों से मिलते हुए बिहार की तरफ लौटे। बंगाल भ्रमण से उन्हें दो लाभ हुए। पहला लाभ यह हुआ कि केवल संस्कृत एवं गुजराती भाषा के बल पर वह सम्पूर्ण देश में अपने विचारों का प्रकाश नहीं फैला सकेंगे। इसके लिये देश के अधिकांश भागों में बोली और समझी जाने वाली भाषा हिन्दी का ज्ञान आवश्यक है। दूसरा सार्वजनिक जीवन में आने पर पूर्ण वस्त्रों का धारण करना भी आवश्यक है। उन्होंने तुरन्त केवल लंगोट लगा कर रहना बन्द कर दिया तथा पूर्ण वस्त्र धारण कर लिये तथा हिन्दी भाषा बोलना और लिखना भी थोड़े ही समय में सीख लिया। मुरादाबाद के राजा जयकृष्ण दास की सलाह पर अपने विचारों को स्थाई रखने की दृष्टि से हिन्दी में सत्यार्थ प्रकाश लिखा, फिर संस्कृति के विकास की दृष्टि से संस्कार विधि लिखी। फिर स्वामी जी के विरोध में जहाँ–जहाँ भी विरोधियों ने पर्चे छपवा कर वितरित किये उनके उत्तर देते हुए पुस्तकें लिखने लगे। अपने जीवन काल में उन्होंने छोटी–बड़ी लगभग 60 पुस्तकें लिखीं। बम्बई प्रवास के समय 7 अप्रैल 1875 को अपने विचारों को लगातार प्रचारित प्रसारित करने हेतु आर्य समाज की स्थापना की। साथ ही देश के कृषि प्रधान होने के कारण गाय के महत्व को जान कर गौ वध बन्द कराने हेतु एक प्रार्थना पत्र लिखकर देश भर से लाखों लोगों के उस पर सहमति सूचक हस्ताक्षर कराये परन्तु अन्य कार्यों में अधिक व्यस्त होने के कारण तथा मृत्यु द्वारा शीघ्र घेर लिये जाने के कारण यह प्रार्थना पत्र महारानी के पास नहीं भेजा जा सका।

देश में फैल रही बेरोजगारी दूर करने के लिये तथा देश में विभिन्न उद्योगों को स्थापित करने के लिये जर्मनी के एक वैज्ञानिक प्रो. जी वाइज से पत्र व्यवहार किया। छः माह तक पत्र व्यवहार चला परन्तु आर्थिक कठिनाई के कारण यहाँ से लोगों को औद्योगिक शिक्षा प्राप्त करने हेतु जर्मनी भेजा जाना संभव नहीं हो सका। लाहौर में स्थानीय व्यक्तियों की सलाह से तकनीकी शिक्षण संस्था प्रारम्भ करना तय हुआ परन्तु वह भी आपके जीवनकाल में संभव नहीं हो सका। वेद भाष्य का कार्य भी चल रहा था। समय–समय पर कई छोटी बड़ी पुस्तकें भी लिखी जा रही थीं। इनके सुव्यवस्थित प्रकाशन के लिये एक निजी प्रेस की स्वामी जी ने आवश्यकता अनुभव की। आर्य समाज मेरठ ने इस पर आर्थिक सहमति व्यक्त की। आर्य समाज फर्रुखाबाद ने भी इसमें आर्थिक सहयोग दिया।

राजा जयकृष्णदास ने भी इसमें आर्थिक सहयोग दिया। फलस्वरूप 12 फरवरी 1880 गुरुवार को लक्ष्मीकुण्ड स्थित विजय नगराधिपति के उद्यान की छत पर वैदिक यन्त्रालय की स्थापना की गई और मुंशी बख्तावर सिंह को प्रेस का प्रबन्धकर्ता नियुक्त किया गया। इसी मध्य मुम्बई की यात्रा के अवसर पर 7 अप्रैल 1875 को बम्बई में आर्य समाज की स्थापना हो चुकी थी। आर्य समाज के 28 नियम यहाँ स्वीकार किये गये परन्तु बाद में लाहौर आर्य समाज की स्थापना के अवसर पर लोगों के आग्रह पर आर्य समाज के 10 नियमों की रचना की। वेद भाष्य का कार्य भी निरन्तर चलता रहा। स्वामी जी का भाष्य तर्क पूर्ण, विज्ञान का अविरोधी तथा सब प्रकार के आक्षेपों से रहित हुआ। स्वामी जी ने वेद भाष्य में वे तथ्य भी दिये जो वैज्ञानिकों ने उनके लेखों के 30–35 वर्ष पश्चात् घोषित किये। उदाहरणार्थ स्वामीजी ने ऋग्वेद मण्डल सूक्त 164, मन्त्र 19 में सापेक्षता के विषय में तथा ऋग्वेद मण्डल 2 सूक्त, 16 मन्त्र दो में पदार्थ और ऊर्जा के विषय में जो कुछ लिखा, वही आइन्सटीन ने 1910 ई. में कहा। इसी प्रकार स्वामी जी ने यजुर्वेद 23.48 में ऊर्जा के विषय में लिखा कि ऊर्जा में मात्रा (भार) नहीं होता। मन्त्र इस प्रकार है–

ब्रह्म सूर्य सम ज्योति द्यौः समुद्र सरँसरः।
इन्द्रः पृथिव्यै वर्षीयान् गोस्तु मात्रा न विद्यते।
(यजु 23.48)

इससे पूर्व के मन्त्र में जो प्रश्न पूछे गये थे उनके उत्तर इस मन्त्र में दिये गये हैं। एक प्रश्न था कि वह कौन सी वस्तु है जिसमें मात्रा नहीं होती और उत्तर में कहा गया है कि ध्वनि में मात्रा नहीं होती है। सब कार्यों के साथ देश की स्वतंत्रता का कार्य भी प्रारम्भ हो गया था। श्याम जी कृष्ण वर्मा को इंग्लैण्ड पढ़ने को भेजा गया परन्तु उनको मुख्य काम दिया गया विदेशों में भारत की स्वतंत्रता के लिये समर्थन जुटाना। उन्होंने अपने कार्य को तत्परता से प्रारम्भ कर दिया। लोकतंत्र में शासन कैसा होता है इसकी पूरी रूप रेखा सत्यार्थ प्रकाश के छठे समुल्लास में रख दी गई। आठवें समुल्लास में देशी लोकतन्त्र की विदेशी राज्य से श्रेष्ठता घोषित की गई। दसवें समुल्लास में पराधीनता का कारण बताया गया तथा भारत की पूर्व महानता का एक चित्र भी उपस्थित किया। फिर यजुर्वेद अध्याय 9 मंत्र 17.21 में लोगों से परकीय राज्य को नकार देने को कहा गया। मंत्र 17 के भावार्थ में स्वामी जी लिखते हैं– जो ये राजपुरुष हम लोगों से कर लेते हैं वे हमारी निरन्तर रक्षा करें नहीं तो न लें और हम भी उनको कर न देवें। प्रजा की रक्षा और दुष्टों के साथ युद्ध करने के लिए ही कर देना चाहिये, अन्य किसी प्रयोजन के लिए नहीं यह निश्चित है। तथा मंत्र 21 के भावार्थ में वे लिखते हैं– मैं ईश्वर सब मनुष्यों को आज्ञा देता हूँ कि तुम लोग मेरे तुल्य धर्म युक्त गुण, कर्म और स्वभाव वाले पुरुष ही

शेष पृष्ठ 09 पर ☞

भारतीय आस्था का प्रतीक : भगवा

● डॉ. धर्मवीर सेठी

वर्षा ऋतु में जब कभी भगवान भास्कर की रश्मियाँ उद्भासित होती हैं तो वे वर्षा के जल–कणों से छनती हुई नीले आकाश पर एक सतरंगी आभा बिखेरती हैं, जिसकी छटा अपने आप में अद्भुत होती है। बच्चे प्रसन्न होकर उसे सतरंगी पींग (seven coloured planquin) कहकर उछलने लगते हैं। ये सात रंग हैः– लाल (red), भगवा (orange), पीला (yellow), हरा (green), नीला (blue), गहरा नीला (indigo),और बैंगनी (violet)। वस्तुतः यह एक (तीर–) कमान के समान होती है जिसे एक वैज्ञानिक ने **'one of the most spectacular light-show observed on earth'** कहा है। वैज्ञानिक इन सात रंगों को प्रकाश का एकात्म अथवा समूह बताते हैं। आपने अनुभव किया होगा कि कभी–कभी दो रंगों के मेल से तीसरा रंग भी बनाया जाता है। एक विद्वान के अनुसार थोड़ा पीला, थोड़ा नारंगी और थोड़ा लाल मिलाया जाय तो भगवा रंग बनता है। परंतु संतरे (orange) के रंग के साथ भगवा अधिक मेल खाता है। इससे सहअस्तित्व का बोध होता है (संतरे की फाँकें कैसे एक–दूसरे से जुड़ी रहती हैं), 'संगछध्वं' का स्वर निस्सृत होता है। भगवे रंग की यही सीख है।

सूर्य नमस्कार का भारतीय पुरातन संस्कृति में एक विशेष महत्व है। उषा–पान का अभिप्राय है प्रातःकालीन उगते सूर्य की किरणों को नेत्रों के माध्यम से आत्मसात करना। योग की प्रक्रिया में इनका अपना महत्व है। इसी प्रकार सूर्यास्त का चमत्कार भी है। दोनों स्थितियों में जो रंग बिखरता है वह भगवा ही तो है।

गायत्री मंत्र के **'भर्गोदेवस्य धीमहि'** में इसी **'भर्गः'** अर्थात् परमात्मा की तेजयुक्त शक्ति की आराधना है जिसका प्रतिफल है **'धियो यो नः प्रचोदयात्'**– हमारी बुद्धि को उत्कर्ष की ओर ले जाना,। इस **'भर्गः'** में भगवान का ही गुण है। वैसे ही जैसे आग में स्वर्ण को पिघलाया जाता है तो उसकी अपवित्रता नष्ट हो जाती है और वह अपनी पवित्र अवस्था को प्राप्त होता है–यह 'कुन्दन' बनना ही भगवा कहलाता है। वेद विश्व ज्ञान का एन्साइक्लोपीडिया (**Encyclopedia**) है। ऋगवेद के प्रथम मण्डल की प्रथम ऋचा हैः

'अग्निमीके पुरोहितं यज्ञस्य देवं ऋत्विजं। होतारं रत्न धातमम्'। अग्नि पुरोधा है, नेता है। **'अग्नि अग्रणी भवति'**, उसका रंग बिल्कुल भगवा है। भगवा वेष–धारी में नेतृत्व की क्षमता है।

ऋषि–मुनि जब एक आश्रम से दूसरे आश्रम में प्रस्थान करते थे तो अग्नि को अपने साथ ले जाने में कठिनाई होती थी तो उस के प्रतीक भगवा ध्वज को ही अपने साथ रखने और ले जाने की प्रथा चल पड़ी। भगवे रंग में ओज है, तेज है, पवित्रता है (कुंदन बनाने की) और है शक्ति।

इतिहास साक्षी है कि इस रंग के तिकोने झण्डे को पुरातन काल से ही आर्यों द्वारा अपनाया गया है। महाभारत के युद्ध में अर्जुन के रथ पर यही भगवा झण्डा था; राम–रावण युद्ध के समय भी इसी भगवे झण्डे पर हनुमान चित्र अंकित रहता था; संन्यासी (जीवन का चतुर्थ आश्रम) की वेशभूषा भी इसी भगवे रंग की होती है; अंधकार को मिटाने वाली बाती की लौ भी भगवे की ओर ही संकेत करती है। शिवाजी, महाराणा प्रताप सरीखे योद्धाओं ने भी अपने ध्वज को भगवा ही रखा। स्वतंत्रता संग्राम में इसी को लेकर तो सेनानियों ने समर जीते। भारत के राष्ट्रीय ध्वज की ऊपर वाली पट्टी भी भगवे रंग की ही है। भगवा केसरिया से अधिक मेल खाता है और केसर (Saffron) को तो सनातन काल से पवित्र माना गया है। उसका वैसा ही महत्व है जैसा गंगा जल का, अन्यथा उसे माथे पर तिलक के रूप में क्यों धारण किया जाए और मन्दिरों में भी उससे प्रतिमाओं की क्यों अर्चना की जाए।

बुद्ध, जैन और सिक्ख धर्म के अनुयायियों के लिए भी इस रंग का विशेष महत्व है। सिक्ख धर्मावलम्बी तो इसे अनाचार और अत्याचार के विरुद्ध लड़ने का एक जुझारू रंग मानते हैं। 'पंज पियारे' ऐसी ही वेशभूषा धारण कर शोभायात्रा का नेतृत्व करते हैं। बौद्ध भिक्षु इसी भगवे रंग का चोला पहने रहते हैं और इनके पूजा–स्थलों पर भी इसी रंग के ध्वज फहरते हैं।

वस्तुतः यदि कोई ऐसा एक रंग है जो कि समस्त हिन्दू जाति का प्रतीक बन पाया हो तो वह है 'भगवा' –अग्नि अथवा प्रकाश का रंग जो अपने आप में परमपिता परमात्मा के तेजोमय रूप की ओर संकेत करता है। इसकी धार्मिक महत्ता तो अन्य धर्मों, मतों, सम्प्रदायों के उद्भव से भी पहले की मानी गई है।

'भगवा' भगवान (परम शक्ति) की ओर ही संकेत करता है और जब उसे भाग्य विधाता कह कर पुकारा जाता है तब भी इसी तेजोमय रग की ओर ही इंगित होता है और ' भगवान' के प्रथम तीन अक्षर 'भगवा' ही तो है। वैश्विक दृष्टि से यदि देखा जाए तो चीन ने यदि लाल रंग को अपनाया और इस्लामी देशों ने हरे रंग को तो भारत ने रंगों के पार 'भगवा' रंग से अपनी पहचान बनाई क्योंकि यह रंग त्याग, बलिदान और परम सत्य की खोज से जुड़ा है। **'आत्मवत् सर्वभूतेषु'** कह कर इसने सबमें देवत्व की खोज की। इसलिए भगवा प्रतीक बना भारतीय अस्मिता का।

–वरेण्यम्– ए–1055,
सुशान्त लोग–I , गुरुग्राम 122009

राष्ट्रीय प्रेरणापुंज दत्तात्रेय मधुकर देवरस

● हरिकृष्ण निगम

बालासाहेब देवरस (1973 से 1994 तक) संघ थे अस्तित्व के संक्रमण काल में एक ऐसे कर्णधार जिन्हें डा. केशव बलीराम हेडगेवार जी द्वारा स्थापित पहली शाखा में प्रवेश का सौभाग्य मिला था व जो उनकी सांगठनिक प्रक्रिया के माध्यम से आगे बढ़ने व उत्कृष्ट नेतृत्व देने वाले प्रचारक के रूप में उभर कर यावज्जीवन अपने समर्पण भाव के कारण धरातल–स्तर पर संगठन के लिए वरदान सिद्ध हुए थे।

एक न्यायविद् की पृष्ठभूमि में प्रशिक्षित होने के कारण संगठन के कानूनी पक्ष में चलाए संघर्ष में उन्होंने एक अमिट छाप छोड़ी थी। वे संघ के उन चार सर्वोत्कृष्ट प्रभावी प्रवक्ताओं में थे जिन्होंने 1948 में उस पर केन्द्रीय सरकार के लगाए राजनीतिक प्रतिबंध से टक्कर लेकर उसे तर्क के आधार पर सहमति से हटाने का संघर्ष किया था। यह गुरु जी की परामर्श की छाया में लड़ा ऐसा संघर्ष था जिसमें भारतीय समाज के सम्बध में उनका अपना दृष्टिकोण भी सदैव सदाशयी, स्पष्ट और वैज्ञानिक था?

वैसे तो देवरस बन्धु द्वय जिनमें भाऊ राव जी देवरस सम्मिलित किए जाते हैं और राष्ट्रीय–प्रेरणा के दीपस्तम्भ कहे जाते हैं पर बाला साहब देवरस जी संघ के अक्षयवट के बीज स्वरूप थे और संघ जैसे विशाल हिन्दू संगठन में सामाजिक समता के लिए सदैव सर्वस्व समर्पण करने वाली तेजस्वी व अप्रतिम प्रेरणा थे।

यह सर्वविदित है कि 1948 के दौरान गांधी जी की हत्या के बाद गुरु जी को अधिकांश समय जेल में रहना पड़ा था और कुछ युवा स्वयं सेवकों को संघर्ष का भार स्वयमेव उठाना पड़ा था। उस समय डाक्टर साहब की दृष्टि बाला साहब देवरस जी पर केन्द्रित हुई जो उनके अनुसार हर स्तर पर उस समय भी मौन के आवरण के साथ साथ हर स्तर के स्वयंसेवक से तादात्म्य बनाए रखने में सक्षम थे। छोटे से छोटे मुद्दे पर भी बालासाहब देवरस जी की नजर स्पष्ट एवं तर्क पूर्ण थी।

यद्यपि अस्पृश्यता के विरुद्ध संघर्ष और सुधारों के प्रति सजगता हिन्दू समाज में अरसे से जन्म ले चुकी थी और संघ के प्रकल्पों की कार्यविधि में भी वह परिलक्षित थी पर वैचारिक स्तर पर उनका उद्घोष सारे देश की आँखे खोलनें वाला था–**"यदि छुआछूत कोई पाप नहीं है तो इस विश्व में कोई अन्य पाप ही नहीं!** उन्होंने हिन्दू समाज का आह्वान करते हुए कहा था कि इसे समूल नष्ट कर दें–**"थो इट लॉक स्टाक एण्ड बैरल!"** उस समय अनेक अंग्रेजी समाचार पत्र संघ के भविष्य के बारे में शंका प्रकट करते हुए "आफ्टर गुरु जी, हू?" कहकर जैसे संघ के लिए शोक संवाद गढ़ने में भी जुटे थे। पर क्योंकि संघ में मौन सेवा के साथ एक व्यक्ति के वर्चस्व विहीन या वंशवाद व क्षेत्रवाद का कभी नाम निशान नहीं था, बालासाहब देवरस जी मीडिया के प्रचार–दुष्प्रचार से बचकर उस समय भी समाचार माध्यमों के महत्वपूर्ण पत्रकारों से अच्छे सम्बन्ध बनाए रख सके। दिन–प्रतिदिन की स्थानीय राजनीति की उठापटक से बचकर भी वे भ्रष्टाचार–विरोधी एवं लोकतांत्रिक परम्पराओं की रक्षा करने वाले आन्दोलनों की अपनी तरह से अगुवाई करते रहे। एक तरफ जयप्रकाश नारायण के प्रजातांत्रिक मूल्यों का समर्थन, दूसरी ओर नानजी देशमुख के विकास कार्यों में स्वयंसेवकों के जुड़ने का समर्थन उनके हृदय की विशालता का घोतक था। भारतीय जनसंघ के जनता पार्टी में विलय का कष्टकर निर्णय बाला साहब देवरस जैसे अनूठे व्यक्तित्व के धनी ले सकते थे। पर उनकी इस राजनीति की भौगोलिक दृष्टि ने ही आगे आने वाले वर्षों में सदैव के लिए भारत की हिन्दू व्यवस्था–पालिटी– में बदलाव सम्भव बना दिया था। समाज सेवा के क्षेत्र में पहली बार उन्होंने राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ में 1000 समाज सेवा परियोजनाएं प्रारम्भ की थीं जब 1989 में डा. हेडगेवार की जन्म शताब्दी मनाई गई थी। आज इन सेवा परियोजनाओं की संख्या डेढ़ लाख से अधिक पहुंच चुकी है।

शेष पृष्ठ 11 पर ☞

श्रेष्ठ मानव जीवन का आधार–'वैदिक संस्कार'

● मनमोहन कुमार आर्य

संस्कार की चर्चा तो सभी करते व सुनते हैं परन्तु संस्कार का शब्दार्थ व भावार्थ क्या है? संस्कार किसी अपूर्ण, संस्काररहित या संस्कारहीन वस्तु या मनुष्य को संस्कारित कर उसका इच्छित लाभ लेने के लिए गुणवर्धन या अधिकतम मूल्यवर्धन (Value addition) करना है। यह गुणवर्धन व मूल्यवर्धन भौतिक वस्तुओं का किया जाये तो वैल्यू एडीसन कहलाता है और यदि मनुष्य का करते हैं तो इसे ही संस्कार कह कर पुकारते हैं।

मनुष्य जन्म के समय शिशु शारीरिक बल व ज्ञान से रहित होता है। पहला कार्य तो अच्छी प्रकार से उसका पालन–पोषण द्वारा शारीरिक उन्नति करना होता है। इसे शिशु का शारीरिक संस्कार कह सकते हैं। यह कार्य माता के द्वारा मुख्य रूप से होता है जिसमें पिता व परिवार के अन्य लोग भी सहायक होते हैं। बच्चा माता का दुग्ध पीकर, कुछ माह पश्चात् स्वास्थ्य व पुष्टि वर्धक भोजन कर तथा व्यायाम आदि के द्वारा शारीरिक विकास व वृद्धि को प्राप्त होता है। मनुष्य की पहली उन्नति शरीर की उन्नति होती है और इसके लिए जो कुछ भी किया जाता है वह भी संस्कार ही है। शारीरिक उन्नति के पश्चात् सन्तान के लिए सुशिक्षा की आवश्यकता है। शिक्षा रहित सन्तान शूद्र, पशु वा ज्ञानहीन कहलाती है और शिक्षा प्राप्त कर उसकी संज्ञा द्विज अर्थात् ज्ञानवान होती है और वह अपने प्रारब्ध व इस जन्म के आचार्यों द्वारा प्रदत्त ज्ञान से ब्राह्मण, क्षत्रिय या वैश्य बनकर देश व समाज की उन्नति में योगदान करता है। इस प्रकार से संस्कार की यह परिभाषा सामने आती है कि जीवन की उन्नति जो कि धर्म, अर्थ, काम व मोक्ष की प्राप्ति का साधन है, के लिए जो–जो शिक्षा, वेदाध्ययन आदि कार्य व क्रियाकलाप किये जाते हैं वे संस्कार कहलाते हैं।

चार वेद ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद और अथर्ववेद ईश्वरीय ज्ञान हैं जो कि सृष्टि के आरम्भ में चार ऋषियों क्रमशः अग्नि, वायु, आदित्य व अंगिरा को वैदिक भाषा संस्कृत के ज्ञान सहित दिये गये थे। इन वेदों में ईश्वर ने वह ज्ञान मनुष्यों तक पहुंचाया जो आज 1,96,08,53,114 वर्ष बाद भी सुलभ है। **यह वेदों का ज्ञान ही मनुष्य की समग्र उन्नति का आधार है।** इस ज्ञान को माता–पिता और आचार्यों से पढ़कर मनुष्य की समग्र शारीरिक, बौद्धिक, आत्मिक और सामाजिक उन्नति होती है। उदाहरण के रूप में हम आदि पुरुष ब्रह्माजी, महर्षि, मनु, पतंजलि, कपिल, कणाद, गौतम, व्यास, जैमिनी, राम, कृष्ण, चाणक्य, दयानन्द आदि ऐतिहासिक महापुरुषों को ले सकते हैं जिनकी शारीरिक, बौद्धिक और आत्मिक उन्नति का आधार वेद था। वेदाध्ययन यद्यपि वेदारम्भ और उपनयन इन दो संस्कारों के अन्तर्गत आता है परन्तु इन दोनों संस्कारों का महत्व अन्यतम है। नित्य आर्ष ग्रन्थों के स्वाध्याय का भी जीवन में महत्वपूर्ण स्थान है। **वेदों के आधार पर जिन सोलह संस्कारों का विधान है वे क्रमशः गर्भाधान, पुंसवन, सीमन्तोनयन, जातकर्म, नामकरण, निष्क्रमण, अन्नप्राशन, चूड़ाकर्म, कर्णवेध, उपनयन, वेदारम्भ, समावर्तन, विवाह–गृहस्थ, वानप्रस्थ,संन्यास व अन्त्येष्टि संस्कार हैं।** इन संस्कारों को करने से मनुष्य की आत्मा सुभूषित, संस्कारित एवं ज्ञानवान होती है और जीवन के चार पुरुषार्थों **धर्म, अर्थ, काम व मोक्ष** को प्राप्त कर सकती है। इसके साथ नित्य प्रति पंचमहायज्ञों यथा सन्ध्योपासना, दैनिक अग्निहोत्र, पितृयज्ञ, अतिथियज्ञ एवं बलिवैश्वदेव यज्ञ का करना अनिवार्य है। इन संस्कारों को विस्तार से जानने के लिए महर्षि दयानन्द सरस्वती कृत संस्कार विधि ग्रन्थ और इसके अनेक व्याख्या ग्रन्थ जिनमें संस्कार भास्कर और संस्कार चन्द्रिका आदि मुख्य हैं, का अध्ययन लाभप्रद होता है।

वैदिक धर्म और संस्कृति में वेदों व वैदिक साहित्य का अध्ययन किए हुए युवक व युवती का विवाह योग्य सन्तान और देश के श्रेष्ठ नागरिकों की उत्पत्ति के लिए होता है। **संसार के शिक्षित और अशिक्षित सभी माता–पिता अपनी सन्तानों को स्वस्थ, दीर्घायु, बलवान, ईश्वरभक्त, धर्मात्मा, मातृ–पितृ–आचार्य–भक्त, विद्यावान, सदाचारी, तेजस्वी, यशस्वी, वर्चस्वी, सुखी, समृद्ध, दानी, देशभक्त आदि बनाना चाहते हैं। इसकी पूर्ति केवल वैदिक धर्म के ज्ञान व तदनुसार आचरण से ही सम्भव है।** आज की स्कूली शिक्षा में वे सभी गुण एक साथ मिलना असम्भव है जिनसे ऐसे योग्य देशभक्त नागरिक उत्पन्न हो सकें। केवल वैदिक शिक्षा से ही इन सब गुणों का एक व्यक्ति में होना सम्भव है जिसके लिए अनुकूल सामाजिक वातावरण भी आवश्यक है। हमारे सभी वैदिक कालीन और कलियुग में महर्षि दयानन्द इन्हीं वैदिक संस्कारों में दीक्षित महात्मा थे। वेदों के ज्ञान के कारण ही हमारे देश में ऋषि, महर्षि, योगी, सन्त आदि हुए हैं। अन्य देशों में यह सब गुण किसी एक व्यक्ति में पूरी सृष्टि के इतिहास में नहीं देखे गये हैं। हमारे पौराणिक मित्र व बन्धु वेदों के अध्ययन व आचरण को त्याग कर पुराण सम्मत मूर्तिपूजा, अवतारवाद, फलितज्योतिष, छुआछूत, जन्म पर आधारित जातिवाद जैसे अवैदिक व अनुचित कृत्यों को करने में समय लगाते हैं। इन अवैदिक कृत्यों का जीवन से निराकरण केवल पक्षपातरहित होकर सत्यार्थ प्रकाश आदि ग्रन्थों का अध्ययन कर सदविवेक से कार्य करने पर ही हो सकता है।

सन् 1947 में भारत विदेशी दासता से स्वतन्त्र हुआ। आवश्यकता थी कि देश में सर्वत्र, आध्यात्मिक जीवन में सत्य की प्रतिष्ठा हो, परन्तु इसके विपरीत धर्मनिरपेक्षता का सिद्धान्त बना जहाँ ईश्वर के सत्य ज्ञान वेदों को प्रतिष्ठा नहीं मिली। सभी मतों की पूजा पद्धतियां अलग–अलग हैं। इन्हें संस्कारों व कुसंस्कारों का मिश्रण कहा जा सकता है। अलग–अलग उपासना पद्धतियों से परिणाम भी निश्चित रूप से अलग–अलग ही होंगे। सभी उपासना पद्धतियों से धर्म, अर्थ, काम व मोक्ष की प्राप्ति होना असम्भव है। वह केवल वैदिक उपासना पद्धति से ही सम्भव है। अतः संस्कारों को केन्द्र में रखते हुए अपने जीवन को सत्य को ग्रहण करने वाला, असत्य को निरन्तर व हर क्षण छोड़ने के लिए तत्पर रहने वाला, सबसे प्रीतिपूर्वक, धर्मानुसार, यथायोग्य व्यवहार करने वाला बनाना होगा। यह संस्कारों से ही सम्भव है और यह संस्कार मर्यादा पुरुषोत्तम राम व योगेश्वर कृष्ण सहित हमारे प्राचीन ऋषि–मुनियों एवं महर्षि दयानन्द सरस्वती में रहे हैं जिनका हमें जिनका हमें अनुकरण करना है। इन महापुरुषों के जीवन चरित का अध्ययन कर उनके गुणों को आत्मसात कर सुसंस्कारित हुआ जा सकता है।

निष्कर्ष यह है कि संस्काररहित मनुष्य पशु के समान होता है। अतः प्रत्येक मनुष्य को संस्कार विधि का गहन अध्ययन कर संस्कारों की विधि और उनके महत्व को जानना व समझना चाहिये। वेदाध्ययन कर वेदानुसार आचरण करना चाहिये। शारीरिक उन्नति पर ध्यान देना चाहिये। शुद्ध शाकाहारी व पुष्टिकारक भोजन करते हुए संयमपूर्वक जीवन व्यतीत करना चाहिये।

पता:196 चुक्खूवाला–2
देहरादून–248001
फोन: 09412985121

☞ पृष्ठ 07 का शेष

स्वामी दयानन्द...

की प्रजा होओ, अन्य किसी क्षुद्राशय की प्रजा होना स्वीकार कभी मत करो।

स्वामी दयानन्द ही पहले व्यक्ति हैं जिन्होंने सत्यार्थ प्रकाश के अष्टम समुल्लास में लिखा कि प्रथम सृष्टि तिब्बत में हुई और तब आर्य और दस्युओं में अर्थात् विद्वान् जो देव और अविद्वान् जो असुर, उन में सदा लड़ाई बखेड़ा हुआ किया, जब बहुत उपद्रव हुआ तब आर्य लोग सब भूगोल में उत्तम इस भूमि के खण्ड को जान कर यहीं आकर बसे। इसी से इस देश का नाम आर्यावर्त हुआ। इससे पूर्व इस देश का कोई नाम नहीं था और न कोई आर्यों के पूर्व इस देश में बसते थे क्योंकि आर्य लोग सृष्टि की आदि में कुछ काल पश्चात् तिब्बत से सीधे इसी देश में आकर बसे थे।

स्वामी जी के विचारों की गूंज यूरोप और अमेरिका तक पहुँची। फलस्वरूप स्वामी दयानन्द ही प्रथम भारतीय पुरुष हैं जिनको थियोसोफिकल सोसाइटी का अध्यक्ष बनाया गया। प्रो. मैक्स मूलर जो कहते थे कि वेदों का प्रादुर्भाव ईसा से 1200 से 1350 ई. पूर्व हुआ उन्होंने अपने विचारों को बदलकर India what can it teach ने में कहा कि कोई भी व्यक्ति नहीं बता सकता है कि वेदों का प्रादुर्भाव कब हुआ? इसी तरह मध्य एशिया को आर्यों की मूल उत्पत्ति स्थली मानने से हट कर उन्हें लिखना पड़ा कि जैसा मैंने पूर्व में कहा है वैसे ही पुनः कहता हूँ कि आर्यों का मूल निवास स्थान एशिया की भूमि में ही कहीं है। तिब्बत भी एशिया में ही है।

स्वामी जी ने मृत प्रायः हिन्दू जाति में प्राण फूंके और उनमें आत्म गौरव की भावना भरी। उन्होंने समाज में व्याप्त स्पर्शास्पर्श का विरोध कर मनुष्य मात्र में समानता का प्रचार किया।

समाज सदैव अपने बड़े सम्मानित व्यक्तियों को आदर्श मानकर उनका अनुसरण करता है, इसलिए स्वामी जी ने कुछ राजाओं पर भी प्रभाव डालकर इस कार्य में सहयोग की कामना की। देश के दुर्भाग्य से स्वामी जी अधिक समय जीवित रहकर अपने कार्य को विस्तार न दे पाये। उन्हें 59 वर्ष की आयु में ही विष देकर देवलोक भेज दिया गया, परन्तु बाद में उनके शिष्यों ने गुरु के कार्य को आगे बढ़ाया। देश की स्वाधीनता और विकास में आर्य समाज निरन्तर प्रयत्नशील रहा और परिणाम स्वरूप आज हमारा देश संसार के प्रमुख देशों में अपना स्थान प्राप्त कर सका है।

73, शास्त्री नगर, दादाबाड़ी, कोटा
0744–2501785

पत्र/कविता

है, यह अमूल्य निधि, सत्यार्थ प्रकाश

है, यह अमूल्य निधि, महर्षि दयानन्द कृत, सत्यार्थ प्रकाश।
जिससे होता है अज्ञान, अन्धविश्वास, पाखण्ड का सर्वनाश।।
जब से हुआ हुआ है यह शिक्षाप्रद, प्रेरणादायक, ज्ञान पुञ्जग्रन्थ प्रकाशित।
वेद, जो ईश्वरीय ज्ञान है, उसका विश्व में फैल रहा है प्रकाश।।
है, यह अमूल्य निधि, सत्यार्थ प्रकाश

इस महान् ग्रन्थ में है, प्रेरक, जीवनोपयोगी चौदह समुल्लास।
जिसको पढ़ने से मिलता है सद्ज्ञान और मन में बढ़ता है उल्लास।।
है, यह चारों वेदों का सार सब अति उत्तम सामग्री का संग्रह।
इसमें मिलते हैं हीरे, मोती, जवाहरात करने से सतत् प्रयास।।
है, यह अमूल्य निधि, सत्यार्थ प्रकाश

जो भी उलझने, समस्याएँ आपके जीवन व गृहस्थ में आवें।
ढूँढ़ो इसमें, मिलेगा समाधान, इसलिए पढ़ने का निकालो अवकाश।।
महर्षि का है यह सब से विशेष, अमूल्य, अनुपम, अनोखा ग्रन्थ।
इसमें लिख दी, जीवन की वे सभी बातें, जो हैं खास–खास।।
है, यह अमूल्य निधि, सत्यार्थ प्रकाश

इसके पढ़ने से कितनों के जीवन बदल गये, बने पुरुष महान्।
वैसे तो उदाहरण अनेकों हैं, पर गुरुदत्त, श्रद्धानन्द, अमीचन्द हैं खास।।
जब इसको पढ़ें, समझें और आचरण करें, इसमें लिखे अनुसार।
तब सम्पूर्ण विश्व बन जायेगा स्वर्ग धाम और हो जायेगा सब दुःखों का ह्रास।।
है, यह अमूल्य निधि, सत्यार्थ प्रकाश

इसके साथ नवलखा महल उदयपुर का भी है गौरवपूर्ण स्वार्णिम इतिहास।
यहीं बैठ कर देव दयानन्द ने लिखा था, यह अमर ग्रन्थ सत्यार्थ प्रकाश।।
इसी के प्रचारार्थ महर्षि ने मुम्बई में बनाई आर्य समाज, करने वेदों का प्रकाश
''खुशहाल करना चहता है, इसी का प्रचार जिससे अज्ञान,
अन्धविश्वास का हो जाये विनाश।।
है, यह अमूल्य निधि, सत्यार्थ प्रकाश

खुशहाल चन्द आर्य
180–महात्मा गांधी रोड
दो तल्ला, कोलकाता –700007

एक सर्बमान्य पंचांग निकालने की सख्त ज़रूरत है

तरह–तरह के पंचांगों पर चलने और चलाने वाले पंडितों ने हिंदुओं के अब हर पर्व– त्योहारों को दो दिनों में बाँटने का खेल शुरु कर दिया है। हिंदू धर्म हास्यसस्पद होता जा रहा है। कोई कहता है कि 14 जनवरी को संक्रांति है तो कोई कहता है कि 15 को। ये लोग चाहते हैं कि हर पर्व दो–दो दिन से हो जाये ताकि यजमानों का आराम से दान–दक्षिणा चूसते रहें। मीडिया भी इनकी धर्मांधता को बढ़–चढ़ कर कहने में किसी से पीछे रहना नहीं चाहता।

आज का समूचा शिक्षित वर्ग जानता है (पंचांगी पुरोहितों को छोड़कर) कि 40 हजार कि.मी. तक फैली हुई हमारी धरती से सूर्य तेरह लाख गुना बड़ा एवं 15 करोड़ कि.मी. दूर है, जिसे एक लाख कि.मी. प्रति घंटे की गति से अंडाकार पथ पर हमारी पृथ्वी प्रतिवर्ष 88 करोड़ किमी. परिक्रमा मकर संक्रांति यानि मघारंभ के दिन ही पूरा करती है। इसी दिन को दक्षिणायन का अंत और उत्तरायण का आरंभ कहते हैं। आज की रात सर्वाधिक बड़ी (13 घंटे की) एवं दिन सर्वाधिक छोटा (साढ़े 10 घंटे का) होता है। इसी दिन से उत्तरी गोलार्ध में दिन बड़े और रातें छोटी होने लगती हैं, इसके विपरीत दक्षिणी गोलार्ध में इसी दिन से रातें बड़ी और दिन क्रमशः छोटे होने लगते हैं। सूर्य भी आज से कुछ उत्तर की ओर खिसकने लगते हैं। इस दिन ठीक 6.45 बजे सूर्योदय और 5.15 बजे सूर्यास्त होता है। सूर्य और धरती के बीच का यह वार्षिक परिवर्तन (मकर समक्रांति) 22 दिसंबर को होता है, न कि 14 या 15 जनवरी को।

ठीक इसके छह मास बाद 21 जून को कर्क संक्रांति होता है, इस दिन मकर संक्रांति के विपरीत दिन सबसे बड़ा और रातें सर्वाधिक छोटी होती हैं, सूर्योदय 5.15 बजे और सूर्यास्त 6.45 बजे होता है। आज से उत्तरी गोलार्ध की गरमी घटने और दक्षिणी गोलार्ध की गरमी बढ़ने लगती है क्योंकि उत्तरी गोलार्ध का झुकाव सूर्य के विपरीत दिशा में हाने लगता है। जिसमें सूर्य प्रतिदिन कुछ दक्षिण की ओर खिसक कर उगता है।

पृथ्वी की इसी वार्षिक गति के निश्चित परिवर्तनों को याद रखने हेतु उन्नत भारत के वैज्ञानिक ऋषियों ने वैदिक–पर्वों को प्रतिष्ठित किया था।

22 दिसंबर से होने वाले उत्तरायण को ही आर्यों देवताओं (उत्तरी ध्रुव या उत्तरी गोलार्ध पर रहने वालों) का दिन एवं दक्षिण गोलार्धवासी असुरों की रात कहा जाता है। इसी दिन से आरंभ होने वाले माघ मास या वैदिक तपस मास की प्रतीक्षा में मरणासन्न भीष्म ने अपने प्राणों को रोके रखा। अथर्व वेद (19.7) के अनुसार इसी दिन सूर्य से मघा नक्षत्र की ओर छिटक कर पृथ्वी अपने परिक्रमा पथ को इसी बिंदु पर आकर एक वर्ष में पूरा कर लिया करती है।

आर्यभट्टीय, सूर्यसिद्धांत शिरोमणि, वाराह मिहिर के बृहत् संहिता, पंच सिद्धांतिका आदि के अनुसार भी पृथ्वी की वार्षिक गति में जिन आकाशीय परिवर्तनों (क्रांतियों) के उपरोक्त लक्षण बतलाये गये हैं, वे सब 22 दिसंबर को ही मिलते हैं, न कि 14 या 15 जनवरी को। अतः काशी के पंचागकारों से निवेदन है कि हिंदुओं को अब और अधिक मूर्ख बनाना छोड़कर एक निश्चित सिद्धांत पर किसी एक दिन ही पर्वों को तय करें। आज हिंदुओं का एक सर्वमान्य पंचांग निकालने की सख्त जरुरत है।

आर्य प्रह्लाद गिरि
निंगा, आसन सोल –713370
दूरभाष : 9735132360

****

लुप्त हो रहे हैं-पीपल और बरगद

यह खेद है कि अब पीपल और बरगद के वृक्ष लुप्त होने जा रहे हैं। या इनको सुरक्षा प्रदान कि जानी चाहिए। पर्यावरणविदों की मान्यता है कि पीपल और बरगद के वृक्ष सबसे प्रबल ऑक्सीजन गैस के स्त्रोत हैं। वायु मंडल में बढ़ते कार्बन डाइआक्साइड के ग्राफ को कम करने में लिये इन वृक्षों का रोपण समाज के हित में सर्वोपरी है। वैज्ञानिकों की एंसी मान्यता है कि पीपल का वृक्ष रात्री में भी आक्सीजन गैस को प्रवाहित करता है।

यह भी उल्लेखनीय है कि हमारे देश में सदियों से पीपल और बरगद के वृक्षों के रोपण की परम्परा रही है। समस्त हिन्दू संस्कृति के प्रतिष्ठानों और परिक्षेत्रों, विधालयों, सामाजिक स्थलों और आर्य समाज के परीसरों के पीपल और बरगद के विशालकाय वृक्ष आज भी उपलब्ध हैं।

हमारा समस्त हिन्दू संस्कृति के उपासको से नम्र निवेदन है कि प्रत्येक परिसर में यथा सम्भव पीपल और बरगद के पौधों का रोपण कर पर्यावरण को शुद्ध बनाने का प्रयास करें तथा स्वच्छ भारत एवं स्वस्थ भारत को बल प्रदान करें।

कृष्ण मोहन गोयल
अमरोहा–244221

****

☞ पृष्ठ 08 का शेष

राष्ट्रीय प्रेरणापुंज ...

ऐतिहासिक "एकात्मता यात्रा" एवं "रामजन्मभूमि आन्दोलन" के दौरान जिस प्रकार हिन्दुओं के देशव्यापी दृष्टिकोण में उन्होंने जादुई परिवर्तन लाया था वह इतिहास–मनीषियों व समाजशास्त्रियों के अध्ययन का आज तक विषय बना रहा है। हिन्दुओं की राष्ट्रीय पहचान, एक हजार वर्षों की दासता का प्रतिकार, विश्व इतिहास में नया मोड़ लाने वाला घटनाक्रम, हिन्दुओं का केन्द्रीभूत राजनीतिक प्लेटफार्म–यह सारी अभिव्यक्तियाँ तभी से मानसपटल पर विमर्श का विषय सार्वजनिक विषय बनी थी। देश में नेहरूवाद और सभी रंगों के मार्क्सवादी विचारों के अनुशीलन पर उसी दिन से प्रश्न लगना प्रारंभ हो गया था।

बाला साहब देवरस जी के जीवन के अनेक प्रसंग आज भी याद किए जाते हैं जिनके भावपूर्ण विवरण यदा कदा हिन्दी व मराठी पत्र–पत्रिकाओं में प्रकाशित होते रहे हैं। श्री राम शेवालकर, श्री कुसी. सुदर्शन जी, श्री भा. वर्णेकर, श्री बलवन्त राव किन्हेकर आदि ने उनसे सम्बन्धित अनेक मार्मिक प्रसंगों को चित्रांकित किया है। प्रसिद्ध पत्रकार बनवारी लाल पुरोहित न अपने निजी अनुभव के आधार पर बालासाहब एवं माऊ राव देवरस सेवा न्यास करंजी, तहसील–लांजी, बालाघाट, मध्यप्रदेश के कुछ वर्षों पहले एक प्रकाशन में लिखा था कि नब्बे के दशक के प्रारंभ में यदि राजीव गांधी आश्वासन देकर राममन्दिर से मुकर नहीं जाते तो देवरस बन्धु द्वय का मन्दिर निर्माण का सपना साकार हो चुका होता और इस राष्ट्र के नए इतिहास ने एक नई करवट ली होती। इतिहास अतीत से प्रेरणा लेता है, वर्तमान में जाग्रत रहते हुए ही भविष्य के स्वर्णिम सपनों को साकार किया जा सकता है, यह बालासाहेब देवरस व माऊसाहब देवरस का मानना था। क्योंकि उन दिनों संसद में भाजपा के केवल दो ही सदस्य थे इसलिए बनवारी लाल पुरोहित जैसे कांग्रेसी सांसद की राम भक्ति व राम मन्दिर के लिए हिन्दूमन की व्यथा को सुनकर देवरस बन्धु गदगद् हो गए थे। आज यह कल्पना की जा सकती है कि जब संसद में जन्मभूमि का विवाद चल रहा हो तब बनवारी लाल पुरोहित जैसे दो चार सांसद बंधु बोट क्लब पर दिल्ली में इमाम बुखारी और मुस्लिम लीग या बाबरी मस्जिद के पक्ष में मुस्लिम नेताओं की रैली व गाली व अपमान जनक भड़काऊ भाषा को हिन्दू–विरोधी भाषण सुनने जाने का साहस जुटा पाते थे वे देवरस बन्धुओं के लिए नया अनुभव था। उस समय का ज्वलनशील राजकीय माहौल "बनातवाला बनाम बनवारी लाल" के वाद विवाद के रूप में समाचार पत्रों की सुर्खियों में था। बाद में कहा जाता है कि संसद में इस बहस के परिणाम से तत्कालीन प्रधानमंत्री राजीव गांधी "अस्वस्थ" हो गए और उन्होंने कांग्रेसी संसद सदस्य के विरुद्ध गृहमंत्री बूटा सिंह से भी निष्कासन की कार्यवाही की अनुशंसा की थी। पुरोहित जी जो नागपुर से कांग्रेसी संसद सदस्य थे उनसे भी गुप्त रूप से देवरस बंधुओं के प्रभाव के विषय में एक गोपनीय चर्चा की गई थी।

बलवन्तराव किन्हेकर जी ने लिखा है कि बाला साहब देवरस जी का यदि किसी व्यक्ति से एक बार भी परिचय हो जाए तो व्यक्ति कितना भी साधारण क्यों न हो, वे उस व्यक्ति को भूलते नहीं थे। किन्हेकर जी, ने डोंगरगढ़ रेलवे स्टेशन के प्लेटफार्म की वर्षों पुरानी एक घटना का उल्लेख किया है। स्टेशन पर स्वयंसेवकों की गणवेश में भीड़ थी। एक एक्सप्रेस गाड़ी जो कोलकाता से नागपुर की ओर जा रही थी वहां रुकती है। भारत माता की जय, बाला साहब का अभिवादन आदि का जयघोष हो रहा था। उनकी दृष्टि कहीं दूर स्वयंसेवकों के पीछे खड़े एक व्यक्ति को निहारने लगी। उन्होंने आवाज दी–'अरे डाक्टर!' और हाथ फैला दिए। वह व्यक्ति जो डाक्टर था एवं सहज ही जिज्ञासावश प्लेटफार्म पर उन्हें केवल देखने के इरादे से वहाँ खड़ा था, आश्चर्य से भर गया। वह समीप पहुंचा एवं उन्हें प्रणाम किया। उससे कुशलक्षेम पूछा कहा कि तुम यहाँ कैसे? डाक्टर ने उत्तर दिया कि आजकल मैं यहा पर गवर्नमेन्ट अस्पताल में स्थानान्तरित होकर आया हूँ।

कुछ देर पश्चात ही ट्रेन रवाना हुई। डाक्टर अपने ही मन में विचार करने लगे। क्या गजब का व्यक्तित्व है। आज मेरे जैसे सामान्य व्यक्ति को देखते ही स्मरण किया जब कि मेरी भेंट अपने जीवन में उनसे केवल पांच मिनट के उनके वास्तव में एक देहात में जहां मैं कार्यरत था, लांजी में हुई थी। आपातकाल के पश्चात उनका जगह जगह स्वागत–सत्कार हुआ था। उसी क्रम में वे लांजी ग्राम की पंचायत के भवन में रुके हुए थे जहां ग्राम के सरपंच एवं प्रायः सभी गणमान्य एवं प्रतिष्ठित व्यक्ति उनके स्वागत–सत्कार के लिए एकत्रित हुए थे–उनमें से मैं भी एक था। मेरा भी उनसे परिचय कराया गया था। यह घटना दशकों पुरानी है पर एक महापुरुष का मुझे पहचान लेना उनके प्रति मेरे आदर को बहुत बढ़ा देता है।

अपने समय में भी तत्कालीन कथित राष्ट्रीय अंग्रेजी दैनिकों में संघ के विरुद्ध जिस स्तर का दुष्प्रचार चलता था वह भी आज की तरह घृणास्पद कहा जा सकता है। केवल एक अन्तर है कि सम्पादक, मीडिया कर्मी या कांग्रेसी अथवा मार्क्सवादी नेता कितना ही ख्याति प्राप्त हो, बालासाहब देवरस जी उसका दो–टूक उत्तर देने में एक क्षण की देरी नहीं करते थे। हिन्दू राष्ट्र की अवधारणा, सामाजिक समस्यायें, संघ की नीतियाँ, साम्प्रदायिकता आदि पर लगाये आक्षेप और विभिन्न विषयों पर समय समय पूछे गए प्रश्नों के बालासाहेब देवरस जी द्वारा दिए कुछ उत्तर आज भी प्रासंगिक लगते हैं और राष्ट्रविरोधियों की कलई खोल सकता है।

एक बार एक पत्रकार सम्मेलन में प्रतिबंध को उचित ठहराते हुए एक सम्पादक महोदय ने संघ पर साम्प्रदायिक, प्रतिक्रियावादी, पुनरुत्थानवादी, पाषाणयुगीन जैसे रटे रटाये आरोपों की झड़ी लगा दी। बालासाहब देवरस ने कड़े शब्दों में टोकते हुए कहा कि सबसे पहले आप अपनी गालियों के एजेन्ट के रूप में काम करना बन्द करें तो हमारी समझ में आए। मिथ्यारोपों द्वारा संघ को बदनान करने का ही यदि आपका उद्देश्य है तो आप अपने समय समय पर कम्युनिस्टों व सहयात्रियों के तमाशे को स्वयं परखें। उनमें से एक जो संसद सदस्य भी है एक पुस्तक लिखी है–आर. एस. एस. ऑफ्टर गोलवलकर" (गोलवलकर के बाद संघ) जिसमें लिखा है, 'गुरु जी का हिन्दू महासभा से झगड़ा हो गया, क्योंकि वे उसके महामंत्री बनना चाहते थे। वे उस पद के चुनाव के लिए खड़े हुए और हार गए। और तब वे राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ में आए।" हम सब के लिए आश्चर्य चकित करने वाली यह ऐसी सूचना थी कि जैसे हम सब से अधिक वे सज्जन ही गुरुजी के बारे में जानते थे। इस तरह की धोखाधड़ी और धृष्टता कांग्रेसी व साम्यवादियों का 'ब्रैण्ड' बन गया था। श्री गोविन्द सहाय ने एक ग्रंथ लिखा था जिसमें उन्होंने कहा कि संघ आरम्भ करने से पहले डा. हेडगेवार हिटलर से मिलने के लिए जर्मनी गये थे। हर कोई जानता है कि डा. हेडगेवार ने एक बार भी देश के बाहर पैर नहीं रखा। ऐसे ही झूठ को स्वयं कांग्रेस के शीर्षस्थ नेता व पूर्व प्रधानमंत्री बढ़ावा देते रहे और राष्ट्र की बुनियाद को खोदने में लगे रहे थे। बालासाहब देवरस के अनुसार संघ पर प्रतिबंध की मांग करने वालों के मुंह पर तमाचे पड़ते रहने पर भी, वे इसको बढ़ने से नहीं रोक सके थे।

एक दूसरे प्रश्न के उत्तर में बालासाहेब देवरस जी ने 'संघ विरोधी अभियान की जड़ मुस्लिम वोट पर' रखी दृष्टि को बताया था और सहधर्मियों की वोट डालने के प्रति उपेक्षा की प्रवृत्ति कहा था। "कदाचित हिन्दुओं के अधिकाधिक संख्या में मतदान करने की नई आदत ने ही अनायास आज का राजनीतिक चित्र बदला है।

स्वयं बालासाहेब ने लिखा है कि 1962 के चीन के आक्रमण के समय नेहरू जी ने संघ के लोगों को देशभक्त कह कर 1963 में 26 जनवरी की गणतंत्र की परेड में निमंत्रित किया था। समाचार पत्रों में इस कदम व कुछ कांग्रेसियों ने विवाद उठाया तब पण्डित नेहरू ने उत्तर दिया था कि संघ के लोग भी देशभक्त हैं और हर आपदा में आगे रहते हैं। इसी कारण संघ के स्वयंसेवकों ने पूर्ण गणवेश में 1963 के गणतंत्र दिवस संचलन में भाग लिया था। साम्यवादी जी भारत के ऊपर आक्रमण में चीनियों को दोषी न मानने का राष्ट्रद्रोही कृत्य कर सकते थे आज भी अपने को हर घटना में नायक की तरह प्रस्तुत करते हैं, बालासाहब देवरस के अनुसार समस्त भारतीय प्रायद्वीप के शत्रु रहे हैं।

1984 के सिख विरोधी दंगे हिन्दू समाज के लिए अस्तित्व की सबसे बड़ी कसौटी थी। कांग्रेस का बड़ा वर्ग उनके विरुद्ध घृणा फैलाने के लिए दोषी था। उस समय संघ प्रमुख के रूप में बालासाहब देवरस उस नरसंहार के विरोध में खुलकर सामने आए थे। उन्होंने हिन्दुओं को कांग्रेसी उन्माद का मोहरा न बनने की अपील की थी। पटना, भरतपुर, रांची, कानपुर एवं जमशेदपुर के स्वयंसेवको नें अपने क्षेत्रीय पभारियों के उनके बचाव में आकर तनाव कम करने की कोशिश की थी। कांग्रेसी समर्थित अराजक तत्वों ने अपना आक्रोश संघ के गढ़ महाराष्ट्र में सर्वाधिक प्रदर्शित किया था। प्रसिद्ध मराठी फिल्म निर्माता मालाजी पेण्ढारकर का कोल्हापुर का स्टूडियो जलाकर राख कर दिया गया था। बालासाहब की अपील पर संघ कार्यकर्ताओं से पूरी तरह शान्तिपूर्ण प्रतिक्रिया दिखाने की अपील की गई थी। श्री एच.वी. शेशाद्रि के ग्रंथ आर. एस. एस. विजन इन ऐक्शन" में उन सभी घटनाक्रमों की पृष्ठ भूमि है जिनमें देश में दुष्प्रचार के कारण अनेक बार संघ के विरुद्ध मांग की गई, मांग उठते ही विशेष कर बाला साहब देवरस ने अनेक स्तरों पर अपनी लड़ाई जारी रखी। प्रशासन के सर्वोच्च स्तरों, मंत्रियों, प्रेस काउन्सिल, नियामक प्राधिकरणों, राज्य व केन्द्रीय सूचना व संचार विभागों से बेझिझक पत्राचार, उनके प्रत्युत्तर व छोटे छोटे मुद्दों पर उनके तर्कों को काटना आज ऐतिहासिक महत्व के लगते हैं। हिन्दू विश्वासों व आस्था के विरोधियों को ईशनिन्दा (ठसैंचीमउल) के परिणामों में जो इतर धर्मों के रुझान हैं उससे हर हिन्दू का शिक्षा लेने की बात बालासाहब देवरस कह सकते थे।

स्पष्टवादिता व सदाशयता के साथ वे अपने भविष्यदर्शी विचार सर्वत्र, निःशंक होकर सभी के सम्मुख रखते थे। वह स्वदेश प्रेम का अप्रतिम रूप था। उन्हें वस्तुतः आज भी राष्ट्रीय प्रेरणा पुंज एव हिन्दूमन को पुनः जाग्रत करने वाले स्वाभिमानी नेता के रूप में याद करना समीचीन होगा।

ए–1802, पंचशील हाईट्स,
महावीर नगर, कांदिवली (प)
मुम्बई–400067
मो. 9820215464

Delhi Postal R. No. D.L. (ND)-11 \6066\2015-17
अग्रिम अदायगी के बिना भेजने का लाइसैंस नं. U(C)-103 \2015-17
Posted at N.D.P.S.O. ON 20-21 \01 \2016
रजिस्ट्रेशन नं. आर0 एन0 आई0 39\57

बी.बी.के. डी.ए.वी कॉलेज फॉर विमेन, अमृतसर में नववर्ष के उपलक्ष्य में 'वैदिक यज्ञ' का हुआ आयोजन

नववर्ष की पावन बेला में बी.बी. के डी.ए.वी कॉलेज फॉर विमेन, अमृतसर की आर्य युवती सभा एवं स्वामी दयानन्द अध्ययन केन्द्र के संयुक्त तत्त्वावधान में परम्परागत 'वैदिक हवन यज्ञ' का आयोजन किया गया जिसमें ईश्वर से मंगलमय नववर्ष की कामना, बुराईयों का नाश, सकारात्मक सोच का प्रसार एवं समस्त समाज के कल्याण की प्रार्थनाएँ की गई।

नवनियुक्त प्राचार्या डॉ पुष्पिंदर वालिया ने कॉलेज स्टाफ को सम्बोधित करते हुए उन्हें नववर्ष की हार्दिक बधाई दी। अपने सम्भाषण में उन्होंने आर्य समाज के संस्थापक महर्षि दयानन्द सरस्वती एवं डी.ए.वी के संस्थापक महात्मा हंसराज जी के वैदिक आर्दशों एवं सिद्धांतों पर प्रकाश डालते हुए कहा इन महान विचारकों के प्रशस्त मार्गदर्शन से ही आज समस्त डी.ए.वी संस्थाएँ वेदों के प्रचार–प्रसार एवं शिक्षा के क्षेत्र में अपना बहुमूल्य योगदान दे रही हैं। उन्होंने शिक्षकवर्ग को भौतिकी ज्ञान विज्ञान के साथ छात्राओं को वैदिक न नैतिक मूल्यों से सदैव जोड़ कर आर्य (श्रेष्ठ) बनाने के लिए प्रेरित किया।

श्री सुदर्शन कपूर (अध्यक्ष, स्थानीय प्रबंधकर्त्री समिति) ने कॉलेज प्राचार्या का हार्दिक अभिनन्दन किया और उन्होंने कॉलेज को नई बुलन्दियों को छूने की शुभकामनायँ दीं। सरदार महेन्द्रजीत सिह, (वरिष्ठ सदस्य, स्थानीय प्रबंधकर्त्री समिति) ने भी कॉलेज प्राचार्या जी का हार्दिक स्वागत किया और उन्हें भविष्य में कॉलेज को और अधिक उन्नत करने का आशीर्वाद दिया।

नववर्ष के इस यज्ञ में कॉलेज के समस्त टीचिंग व नान टीचिंग स्टाफ ने उत्साहपूर्वक भाग लिया और 'शान्ति पाठ' के साथ हवन यज्ञ सम्पन्न हुआ।

डी.ए.वी. तिगाँव में स्वामी श्रद्धानन्द बलिदान दिवस का आयोजन

डी.ए.वी तिगाँव के प्राँगण में स्वामी श्रद्धानन्द बलिदान दिवस के उपलक्ष्य में "अन्तर सदन यज्ञ रचओ प्रतियोगिता" का आयोजन किया गया जिसमें विद्यालय के तीनों सदनों ने भाग लिया। इस प्रतियोगिता में स्वामी श्रद्धानन्द जी के स्वप्न को साकार करते हुए लड़कियों ने यज्ञ की ब्रह्मा बनकर यज्ञ करवाया। यज्ञ को तीन भागों में विभाजित किया गया था। छात्रों के मन्त्रोच्चारण से एवं यज्ञ की सुगन्धि से विद्यालय का वातावरण सुगन्धित एवं गुंजायमान हो गया।

विद्यालय के मैनजर श्री सतीश आहुजा जी ने इस कार्यक्रम की प्रशंसा की। प्रतियोगिता में दयानन्द सदन ने प्रथम स्थान प्राप्त किया। कार्यक्रम में उपस्थित सभी अभिभावकों एवं अतिथियों ने इस कार्यक्रम की प्रशंसा करते हुए ऐसे कार्यक्रम समय–समय पर करवाने के लिए कहा। विद्यालय के छात्रों ने अपने भजनों, वक्तव्यों एवं कविताओं के द्वारा स्वामी जी के जीवन पर प्रकाश डाला एवं उन्हें श्रद्धांजलि दी।

विद्यालय की प्राचार्या जी ने अभ्यागत अतिथियों अभिभावकों का धन्यवाद किया एवं स्वामी श्रद्धानन्द जी के जीवन से प्रेरणा लेने के लिए प्रेरित किया।

शान्ति पाठ के साथ कार्यक्रम की समाप्ति हुई।

विज्ञान नगर कोटा में आर्य समाज के वार्षिकोत्सव पर हुआ राष्ट्र समृद्धि महायज्ञ

आर्य समाज विज्ञान नगर के वार्षिकोत्सव के शुभ अवसर पर 11 कुण्डीय राष्ट्र समृद्धि महायज्ञ का आयोजन किया गया।

यज्ञ की ब्रहमा डॉ. पवित्रा वेदालंकार के ब्रह्मत्व में आयोजित इस यज्ञ में 11 कुण्डों पर वेदमंत्रों से विशेष आहुतियां दी गईं। प्रत्येक यज्ञ कुण्ड पर चार चार यजमान दम्पत्ति एवं उनके परिवार जन वेदमंत्र लिखित दुपट्टा धारण किए हुए थे। मंच पर ब्रह्मा डॉ. वेदालंकार के साथ आचार्य अग्निमित्र शास्त्री एवं पं. शोभाराम आर्य सस्वर वेदमंत्रों का पाठ कर रहे थे।

समारोह में बोलते हुए आचार्य अग्निमित्र शास्त्री ने कहा कि हमें राष्ट्र के उत्थान के लिए दीक्षित होकर संस्कृति संरक्षण के कार्य करने चाहिएँ। हमारी संस्कृति में राष्ट्र के प्रति अपने कर्तव्य बोध के लिए विवाह संस्कार के अवसर राष्ट्रभत् यज्ञ कराया जाता है। जिसमें नवदम्पत्ति को राष्ट्र के भरण पोषण की प्रतिज्ञा दिलाई जाती है।

आचार्या पवित्रा वेदालंकार ने कहा कि हमारे माता पिता के समान राष्ट्र के हमारे ऊपर अनन्त उपकार हैं। जिसे राष्ट्र भक्ति के द्वारा चुकाया जा सकता है। उन्होंने कहा देश की सेवा तथा अपने कर्तव्य ईमानदारी से पालन करके राष्ट्र का ऋण चुका सकते हैं।

यज्ञ के उपरान्त बिजनौर उत्तरप्रदेश से पधारे आर्य भजनोपदेशक भीष्म आर्य ने मधुर भजनों से समृद्धि यज्ञ के महत्व को बताया। कार्यक्रम की मुख्य अतिथि पूर्व महापौर श्रीमती सुमन रंगी ने कहा कि यज्ञ श्रेष्ठ कर्म है। यज्ञ से समाज में दिव्य भावनाओं का प्रसार होता है। व्यक्ति को जीवन में राष्ट्र को प्राथमिकता देनी चाहिए। संचालन अरविंद पाण्डेय ने किया। आर्य समाज विज्ञान नगर के प्रधान जेएस दुबे ने आभार व्यक्त किया।

आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा मंदिर मार्ग के लिए **एस.के शर्मा** द्वारा प्रकाशित एवं मुद्रित **अरावली प्रिंटर्स एण्ड पब्लिशर्स (प्रा.) लि.,** डब्ल्यू–30, ओखला, फेस–II, नई दिल्ली–110020 (दूरभाष : 26388830–32) से मुद्रित एवं कार्यालय **'आर्य जगत्'** आर्यसमाज भवन मंदिर मार्ग नई दिल्ली से प्रकाशित मो.–9868894601, 23362110, 23360059 सम्पादक – **पूनम सूरी**